वैज्ञानिक जीवनी

(श्रीयुत पञ्चानन नियोगी, एम० ए, एफ़० सि० एस०, की वैज्ञानिक जीवनी नामक बङ्गला पुस्तकका हिन्दी-अनुवाद)

अनुवादक—
रीवानिवासी,
रामेश्वर प्रसाद पाण्डेय

प्रकाशक—
श्रीमध्यभारत-हिन्दी-साहित्य-समिति

Allahabad
PRINTED AT THE BELVEDERE PRINTING WORKS
BY I HALL.

निवेदन

प्रस्तुत पुस्तक राजशाही कालेजके अध्यापक श्रीयुत पञ्चानन नियोगी, एम० ए०, एफ० सी० एस० की वैज्ञानिक-जीवनी नामक बङ्गला पुस्तक का हिन्दी अनुवाद है। इसमें सुश्रुत, नागार्जुन, आर्य्यभट्ट आदि, प्राचीन भारतीय वैज्ञानिकों के और गेलिलिओ, निउटन आदि यूरोपीय वैज्ञानिकोंके जीवनवृत्तान्त और आविष्कारोंका संक्षिप्त परिचय देनेकी चेष्टा की गई है।

मैं श्रीमन्त होलकर सरकारको कृतज्ञ हृदयसे धन्यवाद देता हूँ, जिनकी उदार सहायता से यह पुस्तक हिन्दी संसार के समक्ष प्रस्तुत हो सकी है।

श्रीमान् नियोगी महोदयने प्रसन्नता एवं उदारता पूर्वक अपनी उपर्युक्त पुस्तकका हिन्दी-अनुवाद करनेकी अनुमति देने की कृपा की है। एतदर्थ मैं नियोगी महोदय को हृदयसे धन्यवाद देता हूँ।

मेरे अथवा प्रेसके कम्पोजीटरों की अनवधानतासे पुस्तक में बहुत सी अशुद्धियाँ रह गई हैं। आशा है पाठक इसके लिए क्षमा करेंगे।

सतना
शिवरात्रि १९७८

विनीत
रामेश्वर प्रसाद पाण्डेय

ही सूख गया। प्राय दो हजार वर्षके बाद जब हिन्दू-सतानने फिर मुर्दे को चीरने के लिए औजार उठाया था तब सरकारी विजयदुर्ग से, महानन्दकी सूचनामे, तोप छोडी गई थी और इसके लिए वह भाग्यवान युवक स्वप्नभ्रष्ट देवता समझा जाकर पूजित हुआ था। कह नहीं सकता, हिन्दुओंकी स्वाधीन चिन्ता का यह ज्वलन्त उदाहरण अपनी आखोसे देखकर महर्षि सुश्रुतका हृदय लोभ और अपमानसे फट जाता या नहीं।

शारीरविद्याकी उत्पत्ति।

जिस उन्नत शारीरविद्या और शस्त्रचिकित्साका परिचय सुश्रुत-सहितामें मिलता है उसकी उत्पत्ति वैदिकसाहित्यसे हुई है। जैसे अथर्ववेद शरीरचिकित्साका आदिग्रन्थ है उसी प्रकार सामवेद शस्त्रचिकित्साका उत्पादक है। वैदिक कालमे विविध पशु-याग-यज्ञोंमें मारे गये पशुओ के अग प्रत्यग भिन्न भिन्न देवताओंको अर्पित किये जाते थे। "निहत पशुओंका अङ्ग-प्रत्यङ्ग शास नामकी छुरी द्वारा पृथक् किये जाते थे। जो व्यक्ति इस कामको करता था उसका नाम शमिता होता था। यज्ञभूमिसे लगे हुए जिस स्थानपर यह कर्म होता था उसका नाम शामित्र होता था। उस जगह ही आग जलाकर पशुओंके अङ्ग-प्रत्यङ्ग पकाये जाते थे। जिस अग्निमे पाक-कार्य होता था उसका नाम शामित्रअग्नि होता था। * इस प्रकार पशुओंके भिन्न भिन्न अङ्गोंके ज्ञानसे पिछले जमानेमे शारीरविद्याकी उत्पत्ति

* वङ्गभाषाकी साहित्य-परिषद्-पत्रिका, भाग १७, सख्या ४, मे प्रकाशित और श्रीयुक्त रामेन्द्रसुन्दर त्रिवेदी लिखित

हो सकी थी । वेदके ब्राह्मणग्रन्थ और श्रौतसूत्रके रचनाकाल में इन सब यज्ञोंका प्रचार बढ़ जानेसे अङ्ग-प्रत्यङ्गोंका विभाग सूक्ष्मसे सूक्ष्म हो चला था । वेदोक्त पशुओंके अङ्ग-प्रत्यङ्गके ज्ञानसे आयुर्वेदीय अङ्ग-विनिश्चय विद्याकी उत्पत्ति हुई है, और वेदके अनेक पारिभाषिक शब्द आयुर्वेदमें आ गये हैं ।

सुश्रुतका आविर्भाव-काल ।

सुश्रुत स्वर्गवैद्य धन्वन्तरिके अवतार काशिराज दिवोदास के बारह शिष्योंमें अन्यतम थे । सुश्रुत, उपधेनव, वैतरण, औरभ्र, पौष्कलावत, करवीर्य, गोपुररक्षित, निमि, काङ्कायन, गार्ग्य और गालव—ये काशिराजके बारह शिष्य थे । इनमेंसे कई एक अपने अपने नामसे भिन्न भिन्न शल्यतन्त्र लिख गये थे । वे अब लुप्त हो गये हैं । केवल सुश्रुत संहिता ही प्रचलित है । किन्तु एक वक्त ये सब शल्यतन्त्र प्रचलित थे । इसके प्रमाण मौजूद हैं । टीकाकार शिवदासने चक्रदत्तसंग्रहकी टीकामें गोपुर रक्षित और वैतरणके लिखे शल्यतन्त्रोंसे पाठोद्धार किया है । सुश्रुतके टीकाकार चक्रपाणिने सुश्रुत-संहिताकी टीकामें पौष्कलावततन्त्रसे पाठ उद्धृत किया है । चक्रपाणि ग्यारहवीं सदीके आयुर्वेदकार हैं । शिवदास इनके भी बाद हुए हैं । इससे सिद्ध होता है कि बारहवीं और तेरहवीं सदीमें भी ये सब तन्त्र प्रचलित थे ।

सुश्रुतका आविर्भाव-काल ठीक निर्णीत नहीं हुआ है । "सुश्रुतेन प्रोक्तं सौश्रुतम्" इस वार्तिक सूत्रके अनुसार इसवी सनसे पूर्वकी चौथी सदीके पहले सुश्रुतका होना माना जाता है । नवाविष्कृत बाउयरकी पाण्डुलिपि पढ़ने से जाना

जाता है कि चौथी सदीमें सुश्रुतकी गणना अति प्राचीन आयुर्वेदकारोंमें की जाती थी। दूसरी सदीमें बौद्ध नागार्जुनने प्राचीन सुश्रुतसंहिताको संस्कृत किया था। आजकल वही सुश्रुत संहिता विद्यमान है। टीकाकार डल्लनाचार्यके मतानुसार नागार्जुन सुश्रुतके उत्तरतन्त्रके रचयिता हैं। सुश्रुतके पीछे कई शताब्दियोंतक शल्यविद्या सजीव थी। वाग्भट (तीसरी सदी) के समयमें शल्यविद्या विद्यमान थी, यह उनका अष्टाङ्ग पढ़नेसे अच्छी तरहसे हृदयङ्गम हो सकता है। किन्तु वाग्भटके बादसे क्रमश अङ्गविनिश्चयविद्या और शल्यविद्याकी अवनति होती गई। इसके मुख्यत दो कारण मालूम होते हैं—

पहला—बौद्धधर्मके विस्तारके साथ भारतमें स्वाधीन चिन्ता की उन्नति बहुत अधिक होनेपर भी "अहिंसा परमोधर्म" यह नैतिक वाक्य मुर्दा चीरनेका विरोधी हो पड़ा था। इसी कारण शरीरचिकित्सा विशेषत तान्त्रिक चिकित्सा-पद्धतिकी बहुत उन्नति होनेपर भी बौद्धयुगमें शस्त्रचिकित्साका बहुत अनादर हो चला था।

दूसरा—पहले ब्राह्मण ही अन्य अन्य विद्याओंकी तरह चिकित्साशास्त्र पढ़ते पढ़ाते थे। मुर्देको छूना मनुके अनुशासनसे आरम्भ होकर एक बड़े पाप-कार्यमें परिणत होता आ रहा था। उसके लिए प्रायश्चित्तकी व्यवस्था भी देखी जाती है। मुर्देको न छूने और न चीरने-फाड़नेसे अङ्गविनिश्चय-विद्या और शस्त्रचिकित्सा कभी सजीव नहीं रह सकती। इसी कारण 'शुचि' शासनका यह परिणाम हुआ कि क्रमश भारतमें उन्नत शस्त्रचिकित्सा विद्या निम्न श्रेणीके अनभिज्ञ व्यक्तियोंकी निजस्व सम्पत्ति हो गई। वर्तमान समयमें

स्वदेशीय शस्त्रचिकित्साकी अवनति देखकर महात्मा एल-फिस्टनने सच ही लिखा है—' ble-ding has been left to the barber, bone-setting to the herdsman and the application of blisters to every man "

सुश्रुतोक्त शारीरविद्या ।

सुश्रुतोक्त अङ्गविनिश्चयविद्याका एक छोटेसे प्रवन्धमें सम्यक् परिचय देना असभव है । सुश्रुतका शारीरस्थान पढनेसे ज्ञान पडता है कि विभिन्न अङ्ग-प्रत्यङ्गोंके सूक्ष्म विवरण देना अपनी आखो देखे विना सभव न था । सुश्रुतने शरीरमें सात त्वचा (skin, epidermis), सात कला (cellular tissues and fascia of the body) सात आशय (organs of receptacle) आंत (intestines), नौ द्वार, सोलह कडरा (रज्जुवत् शिरा) बारह जाल (membranes), छ कूर्च, चार रज्जु (tendons) सात सेवनी (sutures), तीन सौ हड्डिया (bones), दो सौ दस हड्डियो के जोड (bone joints), नौ सौ स्नायु (nerves) पाच सौ पेशी (muscles), सात सौ शिरा और एक सौ सात मर्मस्थान (vital parts) बताये है और इनका सूक्ष्म विवरण दिया है । उन्होंने इन सबका केवल विवरण ही नहीं दिया है, वे इस बातका निर्णय भी कर गये है कि शरीरके किस स्थानमें कितने स्नायु, अस्थि, शिरा प्रभृति है । दृष्टान्तके तौरपर यहा तीन सौ हड्डियो का विवरण दिया जाता है—

प्रत्येक पाव की अगुलियो		जघामें .	१
में तीन तीन	१५	जानुमें .	२
पॉव में	१०	उरुमें	१

इसी प्रकार दूसरे पाँवमें	३०	गर्दनमें	२
दोनो हाथोंमें तीस तीस	६०	कण्ठमें	९
कटिदेशमें	१	दोनो हनुओंमें	४
मलद्वारमें	१	दाँतोंमें	३२
योनिदेशमें	१	नासिकामें	३
दो नितम्बोंमें	२	तालुमें	१
पीठमें	३०	कान, गण्ड और शङ्खदेश-में दो दो	६
दोनो पार्श्वोंमें ३६-३६	७२		
छातीमें	८	मस्तकमें	६
वृत्ताकार अक्षक नामक	२	सब	३००

सन् १६२८ में विलियम हार्वेने शरीरमें रक्तकी गतिका आविष्कार किया था। किन्तु हार्वेके बहुत शताब्दी पहले सुश्रुतने रक्तकी गतिका जो आविष्कार किया था वह युरोपके वैज्ञानिकोंके कानों तक न पहुंचा। रक्तकी गतिके सम्बन्धमें सुश्रुत लिख गये हैं—"१७५ रक्तवाहिनी शिराओं द्वारा रक्त समग्र शरीरमें दौड़ता है। ये सब शिरायें यकृत् और प्लीहासे निकलकर सारे शरीरमें फैली हैं। प्रकृतिस्थ अवस्थामें जब रक्त अपनी शिराओंमें दौड़ता है तब धातुओंमें पूर्णता, वर्णमें उज्ज्वलता, स्पर्शज्ञानमें तीक्ष्णता और अन्य नाना प्रकारके गुण उत्पन्न होते हैं। किन्तु वही रक्त जब दूषित हो जाता है तो नाना प्रकारकी रक्तजन्य पीड़ा पैदा होती है।" रक्तकी गतिकी वैज्ञानिक व्याख्या करनेसे हार्वेको गौरव प्राप्त हुआ है, किन्तु रक्तकी गतिका आविष्कार पहले पहल भारतमें हुआ था और भारतवासी इस बातका निसन्देह गौरव कर सकते हैं।

भारतीय शस्त्रचिकित्साकी प्रधानता ।

सुश्रुतोक्त शस्त्रचिकित्साका सम्यक विवरण दो एक पन्नोंमें देना सम्भव नहीं, तथापि पाठकोंको यह बताना ही लेखकका उद्देश्य है कि सुश्रुतके समयमें शस्त्रचिकित्साकी कैसी उन्नति थी। रामायण और महाभारतमें देखते हैं कि उपयुक्त शस्त्रचिकित्सक सेनाके साथ युद्ध क्षेत्रमें जाते थे। राम रावण-युद्धमें रामकी सेनाके शस्त्रचिकित्सक-रूपमें सुषेन नामके साथ लंका गये थे। महाभारतके उद्योगपर्वमें देखते हैं कि युधिष्ठिर और दुर्योधन दोनों ही शस्त्रचिकित्सक और शस्त्रचिकित्साके उपयुक्त बन्धन (bandage) औषधादिका संग्रह कर रहे थे। नकुल शस्त्रचिकित्सा-विज्ञानके पारदर्शी थे। गाय, घोड़े, हाथी आदिकी शस्त्रचिकित्सा प्राचीन भारतमें अज्ञात न थी। जिन युरोपीय पण्डितोंने संस्कृत भाषा और भारतके चिकित्सा विधानकी आलोचना की है उन सबने एक वाक्यसे स्वीकार किया है कि शस्त्रचिकित्सा-विज्ञानमें भारत अनेक विषयोंमें युरोपका शिक्षा-गुरु है। वेबर ने लिखा है "युरोपके आधुनिक चिकित्सकोंने हिन्दुओंसे एक स्थानसे चर्म लेकर दूसरे स्थानमें उस चर्मको जोड़नेका उपाय—जैसे कटी नाक जोड़ देना—(Rhinoplasty) । सीखा है।" प्रसिद्ध डाक्टर हिर्सबर्ग (Dr Hirscherg) ने वेबर साहब के पूर्वोक्त वाक्यका समर्थन किया है और यह भी कहा है कि "आँखका जाला आदि निकालना युरोपने भारतसे सीखा है। यह प्राचीन ग्रीका, मिश्रवासियों तथा अन्य किसी जातिको मालूम न थी।' आधुनिक चिकित्सक असाध्यको साध्य कर रहे हैं, किन्तु आजकल जो सब शस्त्रचिकित्सायें अत्यन्त

कठिन कही जाती हैं, उनमेंसे अनेक जैसे आंखका जाला आदि निकालना, अङ्गच्छेदन (amputation), उदर-विदारण (abdominal section) प्राचीन भारतमें अविदित न था। आधुनिक पाश्चात्य शस्त्रविज्ञानकी अद्भुत उन्नति देखकर सब अकचका जाते हैं, किन्तु हमें यह भूलना न चाहिए कि हम प्राचीन भारतकी उन्नत शस्त्रचिकित्साके गौरवके उत्तराधिकारी हैं।

सुश्रुतोक्त शस्त्रचिकित्सा।

१—शिक्षा

सुश्रुतने शस्त्रचिकित्साको आठ भागोंमें विभक्त किया है—(१) छेद्यक्रिया (किसी अंगका छेदन करना), (२) भेद्यक्रिया, (किसी अंग का भेद करना), (३) लेख्यक्रिया (किसी स्थानका चमडा निकालना), (४) वेध्यक्रिया (दूषित रक्तादि निकालनेके लिए शिरादिका भेद करना), (५) एष्यक्रिया (नालीघा, बाघी आदि रोगोंमें क्षतादिका परिमाण खोजना), (६) आहार्य्यक्रिया (अश्मरी आदि रोगोंसे पैदा हुए द्रव्यादि निकालना), (७) विस्राव्यक्रिया (स्राव उत्पन्न करना) और (८) सीवन (सिलाई करना)। चिकित्सकको शस्त्रक्रियामें पारदर्शिता प्राप्त करनेके लिए शास्त्र पढनेसे ही काम न चलेगा, शस्त्रादि द्वारा प्रकृतरूपसे छेदनादि शस्त्रक्रियाका बहुत दिनोंतक अभ्यास करना होगा। किस प्रकारके कौतूहलवर्द्धक उपायसे गुरु शिष्यको विविध शस्त्रक्रियाओंकी शिक्षा देते थे, इसका आभास नीचे दिया जाता है—

(१) छेद्यक्रिया (incision)—कुम्हड़ा, लौकी आदिका छेदनकर अङ्गछेदनादि प्रणाली सीखनी होगी।

(२) भेद्यक्रिया (puncturing)—चमड़ेकी थैली, मृत पशु के मूत्रकी थैली अथवा चमड़ेकी थैलीमें पानी और कीचड़ भर कर भेद करनेसे भेद्यक्रिया सीखनी होगी।

(३) लेख्यक्रिया (scratching)—मरे पशुका लोमयुक्त चमड़ा निकालकर सीखनी होगी।

(४) वध्यक्रिया (probing)—घुन लगे बाँस या लकड़ी अथवा सूखी लौकीके मुहमें शस्त्र घुसेड़कर वध्यक्रिया सीखनी होगी।

(५) आहार्य्य (extraction)—कटहल आदि फलोंकी मज्जा और मृत पशुके दांतोंमें यन्त्र-प्रवेश कर यह क्रिया सीखनी होगी।

(६) विस्राव्यक्रिया (evacuating fluids)—सेमराकी लकड़ीमें मोम भर और उसमें यन्त्र प्रविष्ट कर रक्त, पीप आदि निकालनेकी प्रणाली सीखनी होगी।

(७) सीव्यक्रिया (sewing)—वस्त्र अथवा नरम चमड़ेको सुईसे सीकर सिलाई सीखनी होगी।

(८) वेध्यक्रिया (boring)—मृत पशुकी शिरा अथवा कमलके नालको वेधकर वेध्यक्रिया सीखनी होगी।

(९) बन्धनकार्य (bandage)—कपड़े आदिके बने पुरुष के अङ्ग-प्रत्यङ्गोंको बाधकर बन्धनकार्य सीखना होगा। कोमल मांसपेशी अथवा कमलके नालको बाधकर सन्धिबन्धन सीखना होगा।

(१०) क्षार और अग्निकार्य (cautery by caustics and fire)—मृत पशुके कोमल मांसपर क्षार और अग्निका प्रयोगकर सीखना होगा।

(११) वस्तिकार्य (catheterisation)—जलपूर्ण कलसीके नीचे छेदकर उसके छेदमें, लौकीके मुहमें अथवा इसी प्रकार के अन्य पदार्थोंमें, पिचकारी का प्रयोगकर, वस्तिक्रिया सीखनी होगी।

इस प्रकार शस्त्रक्रिया अच्छी तरहसे सीखनेके बाद चिकित्सा-कार्यमें अभ्यास और दक्षता प्राप्त करनेपर चिकित्सकको चिकित्सा करनी चाहिए। शस्त्रप्रयोग करनेके पहले चिकित्सकको तत्कर्मोपयोगी यन्त्र, शस्त्र, रुई, कपडा, सूत, पत्ता, ठंडा और गरम जल आदि द्रव्य और उपयुक्त सबल परिचारक जुटाना होगा। मूढगर्भ, उदर, अर्श, अश्मरी, भगन्दर और मुखरोगमें शस्त्र-प्रयोग करनेपर रोगीके भोजन के पहले शस्त्रक्रिया करनी चाहिए। चिकित्सकको विशेष सावधानीसे शस्त्रप्रयोग करना चाहिए, जिससे सूक्ष्म शिरा और स्नायु न कटें। शस्त्रप्रयोग करनेके बाद अँगुलीसे, मवाद रक्त आदि निकाल कर नीमकी पत्तियो आदिके कषायके जलसे अच्छी तरहसे क्षतस्थान धो देना चाहिए। अनन्तर पिसा तिल, मधु और घी मिली वर्त्ती या कपडेकी चिन्दीमें उसे चुपड कर क्षतमें उसे भर देना होगा और इसके बाद अलसीकी पुलटिस दे तीन चार परत कपडेसे दृढ बाँध देना चाहिए। तीन दिनके बाद क्षतस्थान खोलकर नीमकी पत्तियो आदिके कषायके जलसे धो दवा लगा फिर बाँध देना चाहिए। जबतक घाव न सूख जाय तबतक इसी प्रकार धोकर औषध और मरहम लगानी चाहिए।

२—यन्त्र ।

सुश्रुतने १२५ प्रकारके शस्त्रोंका वर्णन किया है। वे दो भागोंमें विभक्त हैं—यन्त्र और शस्त्र। यन्त्र १०१ और शस्त्र २४ है। यन्त्रोंमें हाथ ही सर्व प्रधान यन्त्र है, क्योंकि हाथके विना किसी भी यन्त्रका प्रयोग नहीं किया जा सकता। यन्त्र छः भागोंमें बँटे हैं—(१) स्वस्तिक यन्त्र (चौबीस प्रकारके), (२) सन्दंशयन्त्र (दो प्रकारके), (३) तालयन्त्र (दो प्रकारके), (४) नाड़ीयन्त्र (बीस प्रकार के), (५) शलाकायन्त्र (अट्ठाईस प्रकारके) और (६) उपयन्त्र (पच्चीस प्रकारके)। ये सब यन्त्र लोह वा स्वर्णादि पाँच धातुओंसे बनाये जाते थे। आवश्यकतानुसार अन्य प्रकारके यन्त्र बनानेकी व्यवस्था भी सुश्रुत दे गये हैं।

(१) स्वस्तिकयन्त्र अठारह अंगुल लम्बा होता था और लोहेके दो खण्ड एक कीलसे जुड़े होते थे। सिंह, बाघ, मृग आदि दस प्रकारके पशु और कौआ चील्ह आदि चौदह प्रकारके पक्षियों के मुखके समान चौबीस प्रकारके स्वस्तिकयन्त्र बनाये जाते थे। हाड़में बाण या छुरी आदि शस्त्र बिंध जानेपर उनके निकालनेके लिए स्वस्तिकयन्त्र काममें लाये जाते थे।

(२) सन्दंशयन्त्र सोलह अंगुल लम्बा होता था। एक प्रकार का सन्दंशयन्त्र लोहारके सँडसीकी तरह और दूसरा नाइ के नहन्नो की तरह होता था। चर्म मांस, शिरा और स्नायुसे छोटे शस्त्र या काँटे निकालनेके काममें लाया जाता था।

(३) तालयन्त्र बारह अंगुल लम्बा होता था। इससे कान, नासिका आदि से मल निकाला जाता था।

४—बंधन।

सुश्रुतमें अनेक प्रकारके बन्धनो (bandage) का उल्लेख देखा जाता है। गिरने या किसी प्रकारकी चोटसे देहकी हड्डी या हड्डियां टूट जानेपर, अथवा शस्त्रप्रयोगके बाद, घावपर स्थानभेदसे विविध प्रकारके बन्धनोंका प्रयोग होता था। बन्धनप्रणाली चौदह प्रकारकी थी—(१) कोश, (२) दाम, (३) स्वस्तिक, (४) अनुवेल्लित, (५) प्रतोली, (६) मण्डल, (७) स्थगिका, (८) यमक, (६) खट्वा, (१०) चीन, (११) विबन्ध (१२) वितान, (१३) गोफणा और (१४) पञ्चाङ्गी। सूतके कपडे भेडके लोमके बने वस्त्र, रेशमी कपडे, चमडा, बांस आदि की कमाचियाँ, सूत, लोहे, लकडीकी तख्तियाँ आदिके बन्धन बाँधे जाते थे। जिस स्थानमें जिस प्रकारका बन्धन बैठता था उसी प्रकारका बन्धन बाँधा जाता था। स्थानभेदसे बन्धन तीन प्रकारके होते थे—गाढबन्धन, समबन्धन और शिथिल बन्धन। जो बन्धन खूब कडा बाँधा जाता था और जिसमे पीडा न मालूम होती थी उसे गाढबन्धन, जो बन्धन भीतर ढीला बाँधा जाता था, उसे शिथिल बन्धन और जो न खूब कडा और न ढीला ही होता था उसे समबन्धन कहते थे।

क्षार।

रासायनिक दृष्टिसे भी सुश्रुत आदरणीय है। रसायनके इतिहासमें सुश्रुतकी मृदु, मध्यम और तीक्ष्ण क्षार बनानेकी प्रणाली उल्लेखयोग्य है। चरक और सुश्रुत सज्जिकाक्षार (carbonate of soda) और यवक्षार (carbonate of potash) को भिन्न भिन्न कह गये है। युरोप में बहुत दिनोंतक ये दोनों पदार्थ एक ही माने गये थे।

सुश्रुतने क्षारको तीन भागोंमें बाँटा है—मृदु (mild), मध्य (caustic) और तीक्ष्ण। सुश्रुतने जिसे तीक्ष्ण क्षार लिखा है वह भिन्न प्रकारका क्षार नहीं। उसके मृदुक्षार में दन्ती, द्रावन्ती आदि कई पदार्थ मिश्रित होते थे। हमने मध्यक्षार को तीक्ष्ण क्षार अर्थात् caustic alkali माना है। कारण मध्य शब्द ठीक (caustic) शब्दका द्योतक नहीं।

तीक्ष्णक्षार—तीक्ष्णक्षार बनानेकी प्रणाली आधुनिक विज्ञान सम्मत है। कुटज आदि वृक्षोंकी क्षारात्मक भस्म पानीमें घोलकर छान ली जाती थी। अनन्तर भस्मशर्करा सीपी, शङ्खनाभिका अग्निद्वारा भस्म करनेमें जो चूना (caustic lime) निकलता था, उसके साथ मिलाकर चूल्हे पर चढा आँच देते थे। मृदुक्षार और चूनेको मिलाकर आँच देनेसे अब भी तीक्ष्णक्षार तैयार होता है। तीक्ष्णक्षार को लोहे की कलसीमें मुँह बन्द करके रखना आधुनिक विज्ञान-सम्मत है। तीक्ष्णक्षारके हीनवीर्य (carbonated) हो जानेपर फिर चूनके साथ उसे आँच देनी चाहिए। सुश्रुतने क्षारका गुण ठीक ही लिखा है—कुछ श्वेत वर्ण और मृदु लसीला (soapy)

तेजप्रशमन (Neutralisation)—अम्लरस (acids) के द्वारा तीक्ष्णक्षारका तेज नष्ट होता है। सुश्रुतके समयमें यह भी आविष्कृत था। सुश्रुतने इसका कारण बताया है। लिखा है कि क्षारमें लवणरस होता है। इसीसे अम्लरसके साथ लवणरस मिलनेसे माधुर्य्यगुण प्राप्त होता और तीक्ष्णता चली जाती है। आधुनिक रसायनने प्रमाणित किया है कि अम्ल और क्षार मिलनेसे एक प्रकार का नया पदार्थ पैदा होता है उसे लवण (salt) कहते हैं। इसी

लवणजातीय पदार्थमें अम्ल वा क्षारका गुण न होनेपर अम्ल और क्षार मिलानेसे तीक्ष्णता दूर हो जाती है।

कायचिकित्सा ।

सुश्रुतमें शस्त्रचिकित्साके अतिरिक्त कायचिकित्साके भी उपदेश हैं। चरकने पाच सौ ओषधियोंका उल्लेख किया है। सुश्रुतने सैंतीस गणोंमें प्राय ७६० ओषधियोंका गुण बताया है। इनके अतिरिक्त सुश्रुतमें विविध लवण, छ धातु और विविध खनिज पदार्थोंका ओषधिरूपमें वर्णन है।

हे ऋषि! सुनते हैं तुम ढाई हजार वर्षसे पूर्व आविर्भूत हुए थे, किन्तु तुम इस मर्त्यजगतमें चिरकालसे अमर हो—तुम्हारी संहिता तुमको चिरकाल अमर रक्खेगी। तुम असाधारण शस्त्रचिकित्साका उपदेश जगतको दे गये हो, पर हम भारतवासी होकर भी उसका सम्यक् आदर नहीं कर सके, तुम्हारे बतलाये अस्त्रशस्त्रोंको आंखों से भी न देख पाया। आशीर्वाद दो जिससे भारतके अतीत गौरव, अतीत ज्ञानगरिमा, अतीत स्वाधीनचिन्ताकी निदर्शन-स्वरूप तुम्हारी संहिताका गौरव करनेका अधिकार हम भूल न जायें।

दूसरा परिच्छेद

गेलिलिओ।

भारतमें जितने भिन्न सम्प्रदाय हैं, उतने शायद और किसी देशमें नहीं। शाक्त, शैव, वैष्णव, गाणपत्य आदि विभिन्न धर्मसम्प्रदायोंका पार्थक्य और विवाद पुराण पढ़ने से अच्छी तरह समझ पड़ता है। किन्तु भारतमें इतनी साम्प्रदायिक भिन्नता होनेपरभी युरोपके लोमहर्षण धर्मविप्लवसे तुलना न हो सकेगी। मध्ययुगमें रोमन कैथलिक और प्रास्टेंटो में धर्मके नामसे नरकका जो अभिनय हुआ था, उसकी याद अब भी सभ्य समाजका सिर नीचे झुका देती है। धर्मके नामसे, भगवान के नामसे, सैकड़ों नरनारियोंको जलती आगमें नृशंसभावसे झोंक देनेमें विपक्षी धर्मसम्प्रदायी जरा भी कुंठित न हुए थे। धर्मकी बात दूर रही, चिरशान्तशीतल, विज्ञानतरुछायाश्रित, प्रतिभाशाली विद्वानोंको भी सतानेमें मध्ययुगके यूरोपने आगापीछा न किया। पन्द्रहवीं सदीमें कोपर्निकसने यह प्रचार किया कि पृथिवी चलती है, सूर्यका उदय और अस्त होना सूर्यकी गतिका निर्देशक नहीं, परन्तु पृथिवीके भ्रमणके कारण सूर्योदय और सूर्यास्त होता है। इसके पहले सबका विश्वास था कि पृथिवी ही जगत्का केन्द्रस्थल है और सूर्य और नक्षत्र पृथिवीके चारों ओर घूमते हैं। कोपर्निकस

का मत बाइबलके मतके विरुद्ध था। पुरखोंके पुण्यबल उसको विशेष निर्यातन न भोगना पडा। किन्तु उसके अने मतावलम्बियोंने ही सत्य कहनेसे अशेष यन्त्रना भोग की विख्यात ज्योतिषी टाइका आदि देशसे निकाल दिया गया था ब्रुनो, छ साल रोमनगरके कैदखानेमें बन्द रहनेके बा सन् १६०० में जलती आगमें जला दिया गया। विचि इन्द्रधनुषकी व्याख्या करनेवाले एएटानीओ की मृत्यु डेमिनि के जेलमें हो गई और इसलिए वह जलती आगमें खाक किया जा सका। इस प्रवन्धमें जिस महापुरुष के जीवनचरि की आलोचना की जायगी उन्होंने भी रोमके धर्माध्यक्षों निकट अशेष लॉछना भोगकर अन्तमें मृत्युके चिरशीतल गोदमें विश्राम लिया था। इन सबका अपराध यही था वि इन्होंने जिसे सत्य समझा था उसीका जनसमाजमें निर्भय हो प्रचार किया था। आजकल प्रत्येक स्कूली बालक पृथिवी का परिभ्रमण वृत्तान्त पढ़ता है, किन्तु यदि वह यह सुनेगा कि इसका प्रचार करनेमें किसीको कैदकी सजा मिली थी, कोई चोरडाकुओंकी तरह देशसे निकाल दिये गये थे, किसी किसीको जलती आगमें प्राणतक होम देना पडा था, तो उनके आश्चर्यका ठिकाना न रहेगा। भारतमें कोपर्निकसके बहुत पहले आर्यभटने आविष्कार किया था कि पृथिवी घूमती है। यह मत वेद-पुराणके विरुद्ध न था, यह बात नहीं, किन्तु भारतका चिर उदार धर्मभावने कभी विज्ञानके सेवकों को नहीं सताया। जिन सब महापुरुषोंने विज्ञानकी सेवासे लाञ्छना को बन्धन-जयमाला कह सिर झुकाकर ग्रहण किया था, उनमसे महात्मा गेलिलिओ सर्वप्रधान थे। वृद्धावस्थामें वे अन्धे हो गये थे, किन्तु जवानी और प्रौढ़ावस्थामें उनकी

उज्ज्वल नयन ज्योतिने नैशगगनके अतुल सौन्दर्यके भीतर विश्वजगत्के कितने ही गूढ रहस्योका आविष्कार किया था। यहा उनको ही कुछ आलोचना करनेकी इच्छा है।

गेलिलिओ गेलिलि (Galileo Galilei) का जन्म सन् १५६४ में इटलीके अन्तर्गत पिसा नगरमें हुआ था। उनके पिता विनसेंजका जन्म उच्चकुलमें हुआ था, किन्तु वे दरिद्र थे। अक-शास्त्र और सगीतविद्यामें उनका बडा अनुराग था। गेलिलिओको इन दो विद्याओंका अनुराग पितासे प्राप्त हुआ था। लडकपनसे ही विज्ञानके प्रति गेलिलिओका अनुराग प्रकट होने लगा। वालक गेलिलिओ ऐसे वैसे छोटे छोटे खिलौने यन्त्र आदि तैयार करते देखे जाते थे। विज्ञानपर पुत्रकी ऐसी आसक्ति देखकर पिता कुछ डरे। क्योंकि वे जानते थे कि अङ्कशास्त्र या विज्ञान की सेवा करनेसे पेट पालना बहुत कठिन हो जायगा। उनके समयमें विश्वविद्यालयके चिकित्सा शास्त्रके अध्यापकका वेतन प्राय ५६०० रुपये वार्षिक था किन्तु अङ्कशास्त्रके अध्यापकका वेतन २० रुपये मासिकसे भी कम था। इसीलिए उन्होंने गेलिलिओको चिकित्साशास्त्र पढनेके लिए स्वदेशके विश्व-विद्यालयमें भेज दिया।

किन्तु गेलिलिओ विज्ञान और अङ्कशास्त्रको छोड न सके। पितासे छिपाकर वे ओस्टीलिओ रिसि (Ostilleo Ricci) नामक एक प्रसिद्ध अङ्कशास्त्रविशारदसे यूक्लिडका रेखागणित पढने लगे। थोडे दिनोंमें उन्होंने रेखागणित पूरा कर आर्कि-मिडिसका ग्रन्थ पढना शुरू किया। क्रमसे पितातक यह खबर पहुची। उन्होंने विज्ञानके प्रति पुत्रका स्वाभाविक अनुराग देखकर लाचार हो पुत्रका म । स्वीकार कर लिया। पिताको

अनुमति पाकर बालक गेलिलिओ अङ्कशास्त्र और पदार्थविद्या आन्तरिक अनुरागसे पढने लगे और शीघ्र ही इन दो शास्त्रोंमें विलक्षण पारदर्शी हो गये। अन्तमे वही भय आ उपस्थित हुआ, जो उनके पिताको पहलेसे ही था। छब्बीस वर्षकी उम्रमें गेलिलिओ बीस रुपये मासिक वेतनपर पिसा विश्वविद्यालय में अङ्कशास्त्रके अध्यापक नियुक्त हुए। "यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी" के उदाहरण सर्वत्र देखे जाते है। गेलिलिओ पिताके इच्छानुसार यदि चिकित्साशास्त्र पढते तो शायद एक विलक्षण चिकित्सक हो खूब धन कमा सकते, किन्तु वास्तवमें पृथिवीमें क्या धन कमाना ही जीवनका उद्देश्य है? उन्होंने दरिद्रताको वरणकर जो अमूल्य वस्तु—अक्षय कीर्ति—प्राप्त की वह कुबेरके सम्पूर्ण भडारके बदलेमें भी नहीं मिल सकती।

पेण्डुलमके नियमका आविष्कार।

विद्यार्थि-दशासे ही गेलिलिओ मौलिक गवेषणा करने लगे थ। उन्होंने बीस वर्षकी उम्रके पहले ही पेण्डुलमकी गतिके नियम का आविष्कार किया था। क्लाक घडीका पेण्डुलम सबने ही देखा है, इसी पेण्डुलमकी गतिपर ही घडी चलती है। गेलिलिओ एक दिन गिरजाघर आराधना करने गये थे। गिरजाकी छतकी कडीसे जो बडा लम्प हिल रहा था उसकी ओर उनकी दृष्टि गई। लम्प अभी ही जलाया गया था और अभी तक हिल रहा था। गेलिलिओ एक हाथमें दूसरे हाथ की नाडी का फडकना गिनने लगे और यह भी देखने लगे कि लैम्प कितने वक्तमें एक वार घूमता है। इस

बार उन्होंने देखा कि लैम्प पहले जोरसे और फिर धीरे धीरे हिलने लगा, किन्तु देखा गया कि जोरसे और धीरेसे हिलनेपर भी समान समयमें ही इधरसे उधर हिलता है। नाडी की गतिसे वे उसका समय निर्द्धारित कर रहे थे। वे घर आकर एक रस्सीसे एक भारी चीज बाधकर हिलाने लगे और गिरजामें जो परीक्षा की थी उसे प्रमाणित की। इस प्रकार पेण्डुलमका समगतित्व (Isochronism) आविष्कृत हुआ। पहले वह घडी बनानेके काममें न आया, पहले नाडीकी गति निर्णय करनेके लिए काम आता था, अनन्तर हिडजेंस ने घडी की रचनामें उसका व्यवहार किया।

पतनशील वस्तुओंके गति-नियम का आविष्कार।

आपसे एक सवाल करते हैं, जवाब दीजिये तो। एक दमसेरा और एक एकसेरा वजन ले कलकत्तेके मानूमेण्टके ऊपरसे दोनोंको एक साथ नीचे छोडदें तो बतलाइये कौनसा पहले जमीन पर गिरेगा। यदि आपने गेलिलिओका जीवन-वृत्तान्त न पढा होगा तो निश्चय ही कहेंगे कि दससेरा वजन एकसेराज जनसे दसगने पहले जमीनपर गिरेगा। गेलिलिओके पहले लोग ऐसा ही जानते थे। विख्यात प्राचीन दार्शनिक एरिस्टाटल (Aristotle) ने भी यही शिक्षा दी थी कि दससेरा वजन एकसेरा वजनसे दसगुना भारी होनेके कारण पहले जमीनपर गिरेगा। एरिस्टाटलने जरूर यह बात परीक्षा करके नहीं लिखी थी किन्तु जिस समय उन्होंने यह बात

कही थी, उस समय के लिए वह वेदवाक्य थी । गेलिलिओ का कहना था कि नहीं, दोनो वजन एक साथही जमीनपर गिरेंगे । उस समयके विज्ञ पुरुषोंने गेलिलिओको पागल समझा और उनके इस मतके कारण तरह तरह से उनकी हँसी उडाई । एक दिन वे विश्वविद्यालयके सब अध्यापकोंको साथ ले पिसाके सुविख्यात लीनिंटावर (Leaning tower) को पहुचे। यह विशाल स्तभ आठमंजिला ऊँचा है और एक ओर झुका हुआ है । वे एक पचाससेरा और एक आधसेरा वजन का गोला ले इस स्तम्भपर चढ़े और ऊपर पहुचकर एक ही साथ उन दोनोंको जमीनकी ओर छोड दिया । सबने सोचा था कि इस कामसे गेलिलिओ हास्यास्पद होंगे, किन्तु जब उन्होंने देखा कि दोनों गोले एक साथ ही जमीनपर धडाम से गिर पडे तब वे खुद ही अवाक् हो रहे। उन्होंने दिनमें अपनी आंखोंसे स्पष्ट यह परीक्षा देखकर भी गेलिलिओ की बातका विश्वास न किया । नाना प्रकारकी मनगढन्त बातोंसे अपनी भ्रान्त धारणा की ही पुष्टि की । अन्धविश्वास पत्थर की नाईं ही अचल होता है । ज्ञानकी तेजधाराके बिना उसे हटाना कठिन होता है । यह बात समाज और धर्मसम्बन्धमें जिस प्रकार सत्य है, विज्ञान सम्बन्धमें भी उसी प्रकार सत्य है।

दस सेर और एक सेर वजनकी चीज या चीजें क्यों जमीनपर एक साथ ही गिरती है, इसका मर्म पाठकोंको सहजमें ही बुझाया जा सकता है । मान लीजिये आपने एक सेर वजनके ग्यारह बल तैयार किये हैं और उन ग्यारह बलों को एक साथ ही एक जगह फेंक दिया । अवश्य ही सब एक साथ ही जमीनपर गिरेंगे । इसके बाद उसमेंसे दस बल

को एक साथ एकत्रकर उसे और बाकी एक वलको एक साथ ही ऊपरसे छोड देनेपर वे क्यों एक साथ न गिरेंगे? जिन दस वलोंको एक साथ छोड दिया था वे सव इस वक्त एकत्र कर दिये जाने से क्या दसगुना पहले गिरेंगे? कभी नहीं। इस प्रकार कागजका एक टुकडा और एक रुपया भी साथही जमीनपर गिरेंगे। पर रुपया और कागज एक साथ छोडनेमे कागज हवामें उडता रहेगा। यदि वायु-निष्कासन यन्त्र (air pump) से वहाकी हवा निकाल दी जाय तो रुपया और कागजका टुकडा ठीक एक साथ ही गिरेंगे। विज्ञान सीखनेवाले प्रत्येक छात्रको कालेजमें यह परीक्षा दिखाई जाती है।

गेलिलिओ पिसामें रहकर पतनशील वस्तुओं (falling bodies) के सम्बन्धमें और भी अनेक गवेषणायें करने लगे और अनेक नये सिद्धान्त आविष्कृत हुए। किन्तु वे जैसे ही जैसे नये नये सिद्धान्तोंका आविष्कार करने लगे वैसे ही वैसे उनके शत्रु उनपर खड्गहस्त होने लगे। वे तीन सालके लिए अध्यापक नियत किये गये थे, किन्तु तीन वर्ष भी न होने पाये थे कि उनको नोकरी छोड देनी पडी। इसी समय उनके पिता की मृत्यु हो गई। परिवारमें एक भाई और तीन वहनें थीं। उनकी आर्थिक अवस्था वडी ही शोचनीय हो गई। सोभाग्य से वेनिस की मन्त्रणासभाने उनका नाम सुनकर सन् १५८२ में उनको पडुया विश्वविद्यालयमें अङ्कशास्त्रका अध्यापक नियत किया। वहाँ उन्होंने १८ साल काम किया और इसी समयमें उन्होंने दूरवीक्षणयन्त्र (telescope) का आविष्कारकर उसकी सहायतासे ज्योतिषशास्त्रमें नवीनता ला दी।

दूरबीनका आविष्कार।

गेलिलिओ पदुयामें केवल दो वर्ष अध्यापक रहे थे। इन्हीं समय विज्ञानजगत्में एक लोमहर्षण घटनाका अभिनय हो गया। हम पहले ही लिख आये हैं कि पन्द्रहवीं सदीमें कोपर्निकसने प्रचार किया था कि पृथिवी चलती है। वह सूर्यकी परिक्रमा करती है और इसीसे सूर्योदय और सूर्यास्त होता है। उनके पूर्ववर्ती ज्योतिषियों और बाइबलका कहना था कि पृथिवी ही इस जगत्का केन्द्रस्थल है। चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र सभी पृथिवीके चारो ओर घूमते हैं। कोपर्निकसने अपनी पुस्तक निकलनेके थोडे ही समय बाद इस संसारसे कूच किया। नहीं तो धर्मशास्त्रके विरुद्ध आविष्कार करनेके कारण उनको निश्चय ही निर्यातन भोगना पडता। उनकी मृत्युके बाद विख्यात ज्योतिषी टाइको ब्राहीने उनके मतको पुष्ट किया था और इस कारण वह देशसे निकाल दिया गया था। टाइको ब्राही, केपलर और गेलिलिओके समसामयिक गिओडानो ब्रूनो (Giodano Bruno) नामका एक तेजस्वी ईटलीवासी कोपर्निकसका मत खुलमखुल्ला प्रचार करने लगा। वह स्पष्टवक्ता था। भय किसे कहते हैं, जानता न था। जब बाइबलके विरुद्ध मत प्रचार करनेके लिए उसे निषेध किया गया उस समय उसने जवाब दिया कि बाइबल मनुष्य को भगवानको, प्यारी है, और पवित्र जीवन बितानेकी शिक्षा देनेके लिए लिखी गई है, विज्ञानके रहस्य निर्द्धारित करनेके लिए लिखी नहीं गई है।

रोमन कैथलिग खीष्टान धर्मके प्रधान पुरोहित रोमके पोप होते थे। उस जमानेमें धर्मद्वेषियोंके विचारके लिए

इंक्विजिशन (Inquisition) नामका एक न्यायालय था। यहाके न्यायाधीश उच्चपदस्थ धर्मप्रचारक थे। इसी न्यायालयमें धर्मद्वेषी ब्रूनोका विचार हुआ। और उसे छ सालके लिए जेलकी सजा दी गई। फिर भी निर्भीकताके साथ अपने मतका पोषण करनेसे सन् १६०० की १२ वीं फरवरीको वह जलती आगमें जला दिया गया।

गेलिलिओ युवावस्थासे ही कोपर्निकसके मतके पोषक थे। इसी कारणसे ब्रूनोकी इस प्रकार शोचनीय मृत्यु होनेकी खबरसे वे स्वयं विचलित न हुए हों, यह मालूम नहीं होता। गेलिलिओ कोपर्निकसके मतका समर्थन करनेके लिए बहुत दिनोंसे नये प्रमाण सग्रह कर रहे थे। उन्होंने अपने समसामयिक प्रसिद्ध ज्योतिषी केपलरको एक पत्रमें लिखा था कि—"मैंने प्रचलित सिद्धान्तके विरुद्ध अनेक युक्तियोंका सग्रह किया है, किन्तु उनको प्रकाशित करनेका साहस नहीं होता। कारण मुझे डर लग रहा है कि ऐसा होनेसे हमारे गुरु कोपर्निकस की सी जैसी मेरी भी दशा होगी। यद्यपि वे कितने ही मनुष्योंकी दृष्टिमें अपनी अशेष ख्याति कर गये हैं, किन्तु अधिकाश निर्बोध व्यक्तियोंके निकट उपहास और घृणाके पात्र हो रहे हैं।"

कोपर्निकसका मत बाइबलके मतके विरुद्ध था और इस लिए वे सबके निकट उपहास और घृणाके पात्र बने थे, यही एक कारण नहीं है। इसका प्रधान कारण मान व चरित्रका एक प्रधान गूढ रहस्य है। कोपर्निकसके सैकडों वर्ष पहले, एरिस्टाटल दलेमें, हिपार्कास प्रभृति प्राचीन दार्शनिक विरुद्ध शिक्षा दे गये हैं। वे ऋषिरूप थे। उनके मतको

भ्रममूलक सोचना भी महापाप है। कोपर्निकस और गेलिलिओ के समसामयिक पण्डित यह समझ नहीं सके कि विज्ञान के विषयमें लोकविचार करने का अवसर नहीं। अमुकके कहने से सत्य सत्य नहीं है, बल्कि सत्य सत्य होने से ही सत्य है। वाग्भट्ट कहते हैं—

ऋषिप्रणीते प्रीतिश्चेन्मुक्त्वा चरकसुश्रुतौ।
भेडाद्या किं न पठ्यन्ते तस्माद् ग्राह्यं सुभाषितम्॥

यदि वे जानते होते तो इतना अनर्थ और रक्तपात न होता। स्वाधीन चिन्ता, विकाश, विस्तृति विज्ञानके प्राण हैं। यदि यह स्थिर हो जाय कि अमुक प्राचीन मत भ्रममूलक है तो विज्ञान उसे समूल उखाड देगा ही। उसका जन्मदाता अमुक है, कहनेसे मुँह न ताकता रहेगा। विज्ञानकी प्रतिष्ठा सत्यके ऊपर है। उसके सेवक सत्यकी महिमासे दीप्त हो पृथिवीके अत्याचारको तुच्छ समझते हैं। इसीसे देखते हैं, कोपर्निकस, टाइको, ब्रूनो, गेलिलिओ ने लोकलज्जा और उपहासमे न डरकर निर्भय चित्तसे विज्ञानकी महिमाकी घोषणा की थी।

किन्तु कोपर्निकसको हुए कई शताब्दियाँ बीत चुकी हैं, ससारने बहुत अभिज्ञता प्राप्त करली है तो भी इस समय इन प्राचीनोंके प्रति अहेतुकी भक्ति नहीं गई है। उस समय जब चार्ल्स डारविनने मनुष्यके क्रम विवर्तनकी बातका प्रचार किया था उस समय अनेकोंने उनको ईसाई धर्मका विरोधी कहा था। हमारे देशमें भी कितने ही पुरानी लकीरके फकीर हो रहे हैं। यदि कोई कहे कि "स्वर्णघटित मकरध्वज" पत्थर के कटोरेकी तरह एक अवास्तव पदार्थ है तो उसके कथनकी हँसी उडानेवाले कितनेही लोग खडे हो जायगे। प्राचीनोंके

प्रति सम्मान करेंगे, किन्तु प्राचीन होनेसे ही अमुक बात अभ्रान्त है, यह स्वीकार न करेंगे। कोपर्निकस और गेलिलिओ का जीवनचरित पढनेसे यह शिक्षा मिल सकती है।

पहले कहा गया है कि कोपर्निकसके मतको पुष्ट करनेके लिए गेलिलिओ प्रमाण सग्रह कर रहे थे। अबतक कोपर्निकस का मत अधिकतर अनुमानोपर निर्भर था। गेलिलिओ दूरबीन का आविष्कारकर उसका प्रत्यक्ष प्रमाण सग्रह कर सके थे। दूरबीनका आविष्कार कुछ विचित्र था। हालेण्डमें जानसन और लिपार्स नामके दो चश्मा बेचनेवाले थे। प्रवाद यह है कि जानसेनके दो बच्चोंने एक दिन दो आतसी काच लिये खेलते खेलते देखा कि दोनो काचोंको समान रखनेसे सामनेके गिरजाका शिखर पास और उल्टा दिखाई देता है। उन्होंने यह आश्चर्य देख कर पितासे कहा। यह खबर पा जानसन और लिपार्सने दोनो काचोंको एक लकडीपर बिठा चश्मेकी दूकानमें रख दिया और उसे नया खिलोना बताने लगे। एक दिन मारकुइस स्पिनोला नामके एक सम्भ्रान्त व्यक्ति उस दूकान से उस खिलौनेको खरीद लाये और उसे युवराज मारिस दिखाया। जो हो इन चश्मा बेंचनेवालोंके खिलोनेका अस्पष्ट सवाद गेलिलिओने सुना था। गेलिलिओ यह खबर सुन इतने विचलित हो पड़े कि दिन रात इसी विषयमें चिन्ता करने लगे। उन्होंने सोच कर निश्चय किया था कि जब इस खिलौने मे दूरके गिरजेका शिखर पास दिखाई देता है तो बहुत दूर-वाले आकाशके नक्षत्र क्या इस यन्त्रकी सहायतासे पास न दिखाई देंगे? यदि हो सके तो आकाशमार्गके कितने ही गुप्त रहस्य प्रकट हो जायगे, तो कितना अविदित जगत् प्रत्यक्ष

दिखाई न देगा, चन्द्रमा, सूर्य और ग्रहनक्षत्रोंके सम्बन्धकी कितनी ही नई और अद्भुत बातें न मालूम हो जायंगी। इस प्रकारकी धारणाने उनको एक बारगी चंचल कर दिया। वे शान्त न रह सके। उनके पास अर्गन बजानेका एक नल था। अनेक चेष्टाके बाद नलके एक सिरे में उन्नतोदर (Convex) लेंस और एक सिरेमे नतोदर (Concave) लेंस बिठा कर उसके द्वारा लोलुपनेत्रसे चारों ओर देखने लगे। उन्हें वही मिल गया, जिसे वे खोज रहे थे। उनसे दूर की चीजें बहुत पास और तीनगुना बड़ी दिखाई देने लगी। किन्तु इससे उपर्युक्त चश्मा बेचनेवालोके खिलौनेकी तरह चीजें उल्टी न दिखाई देती थी। उस समय उनके आनन्दका ठिकाना न था। वास्तवमें ही कोई वैज्ञानिक आविष्कार हो जानेपर मन आनन्दसे कितना उछल पड़ता है, इसका अनुभव भुक्तभोगी के सिवा और कोई नहीं कर सकता। आनन्द से हँसने नाचने और थोड़ी देरके लिए बेहोश हो जानेकी बात सुनी जाती है। आर्किमिडिसके विषयमें कहा जाता है कि एक दिन जब वे स्नान घरमे स्नान कर रहे थे उसी समय एक कल्पित विषय की मीमांसा मनमें बैठ गई इससे वे इतने बेखबर हो गये कि नगे बदन चलती सड़कसे "पा गया, पा गया" कहते दौड़ते हुए घर पहुचे थे।

गेलिलिओ इस अद्भुत यन्त्रको ले जल्दी जल्दी वेनिश नगर गये और वहाँके सम्भ्रान्त व्यक्तियोको दिखा दिखाकर उनको आश्चर्यचकित करने लगे। बुड्ढे भी लाठी टेकते टेकते ऊपर चढ़कर यन्त्रके द्वारा दूरकी जहाजें पास देखकर आनन्दित होने लगे। चारो ओर उनका नाम फैल गया।

'विद्वान् सर्वत्र पूज्यते"—यथा राजद्वारमें क्या सडकपर सर्वत्र ही उनका आदर होने लगा। अधिकारियोंने उनकी तनख्वाह दूनी कर उनकी अध्यापकता आजीवन के लिए कर दी।

इसके बाद वे एक ऐसा यन्त्र बनानेकी चेष्टा करने लगे, जिसके द्वारा और भी अधिक दूरकी चीजें पास दिखाई दे सकें। खुद ही लेंस घिसकर उन्होंने और एक यन्त्र तैयार कर डाला। इस यन्त्रके द्वारा अब वे नित्य रात रात भर जगकर नीले आकाश के सौन्दर्य की परीक्षा करने लगे।

विज्ञान सीखनेवाले प्रत्येक छात्रको ही गेलिलिओके दूरबीन यन्त्रकी क्रिया मालूम है। साधारण पाठकोंको उसके सम्बन्धमें स्थूल रूपसे यहाँ कुछ बताया जाता है। साधारण आतसी शीशा सबने ही देखा है। वह उन्नतोदर लेंस है। यदि आतसी शीशेके द्वारा सूर्यकी किरणे सयत की जायें तो सूर्यकी एक गोली सादी आकृति एक ओर गिरती है। वह उल्टी होती है। पासकी यह उल्टी आकृति उन्नतोदर लेंस से देखने में उल्टी और बड़ी दिखाई पडती है। दूरबीनमें एक उन्नतोदर और एक नतोदर लेंस लगानेसे सीधी आकृति दिखाई देती थी। चश्मा बेचनेवालों ने दोनों उन्नतोदर लेंस लगाये थे इसलिए आकृति उल्टी दिखाई देती थी। आज बृहत् से बृहत्तर दूरवीक्षण यन्त्रोंमें घूमती हुई ज्योतियाँ अनन्तसौरजगत् सृष्टि स्थितिलयके सम्बन्ध में अनेक अश्रुतपूर्व अचिन्तनीय बातें मनुष्यको प्रत्यक्ष दिखाई पडती हैं। इस दूरवीक्षण यन्त्रका आविष्कर्ता जिस देशमें पैदा हुआ था उस देशके खलप्रसू होनेमें कोई सन्देह नहीं।

चन्द्र।

गेलिलिओने स्वभावत ही चन्द्रमाकी ओर अपनी दूरबीन घुमाई। हाय कवियो, तुम्ही विज्ञानके प्रधान शत्रु हो। तुम स्त्रियों के सुन्दर मुखोंके साथ उसकी तुलना करते रहो, इस पर आपत्ति न करूँगा, किन्तु तुम कवि हो, नशेके झोंकेमें चन्द्रमाके मध्यस्थित पर्वतो, उपत्यकाको कलंकका चिन्ह, बुढिये का चरखा आदिकी अजव कल्पनाकर विज्ञानका रास्ता एक बारगी रोक दिया है। तुमने लोगोंमें प्रचार किया है कि इन्द्र-धनुष, इन्द्र या रामका धनुष है। तुमने नक्षत्रोंको सुरसुन्दरिया गढकर चन्द्रमाको रोहनी आदि सत्ताईस सुरसुन्दरियोका बहुपत्नीक स्वामी बताया है। पुराण प्रभृति शास्त्रोंने तुम्हारे वाक्योंको अभ्रान्त वैज्ञानिक व्याख्या समझकर ग्रहण कर लिया है। यह केवल भारतकी ही बात है यह बात नहीं। समग्र आदिम मनुष्य समाजमें इस प्रकार की कल्पनाका अभाव नहीं। इसीसे जव गेलिलिओने अपने यन्त्रसे देखा कि पृथिवी की तरह चन्द्रमामें भी पर्वत, उपत्यका, मैदान आदि हैं तव उन बातोंका किसीने विश्वास न किया। ऐसा भी कभी हो सकता है? यह स्वर्गीय शान्तशीतल सुधामय चन्द्रवदन क्या कभी पर्वत आदि से परिपूर्ण हो सकता है? उन्होंने फिर इन सब पहाड़ोंकी ऊँचाई भी नापी थी, कोई पाँच मील ऊँचा था, कोई सात मील ऊँचा था। अपराधोंकी संख्या अब भी पूरी नहीं हुई। उन्होंने प्रचार किया कि जैसे चन्द्रमा सूर्यरश्मि

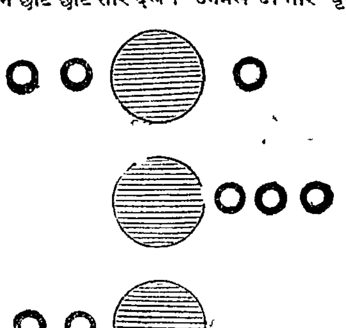
प्रतिफलितकर किरण फैलाता है उसी प्रकार पृथिवी भी किरण फेलाती है। सभी तृतीया-चतुर्थीके चाँदमें देखते हैं, कि हँसिये की तरह चाँदके उज्ज्वल फलाके साथ चन्द्रमाका अपर अश अस्पष्ट दिखाई देता है। गेलिलिओने सोचा कि इस प्रकार दिखाई पडनेका और कोई कारण नहीं—चन्द्रमापर पृथिवीकी किरणें पडनेसे चन्द्रमामें पृथिवीकी ज्योत्स्ना दिखाई देती है। हम लोग जैसे पृथिवीसे चन्द्रमाको देखते हैं, उसी प्रकार चन्द्रमासे भी यदि वहाँ कोई देखे तो पृथिवी भी अलोकमय दिखाई पडती। केवल पृथिवी चन्द्रमासे अधिक प्रकाशमान और उससे सोलहगुना वडी दिखाई देती।

गेलिलिओके इन सब आविष्कारोंने उस समयके पण्डितोंमें कटे घावपर नोनका काम दिया है। कोपर्निकसके विरोधी कहते थे कि पृथिवी ग्रह नहीं हो सकती। कारण अन्यान्य ग्रहोंकी तरह उसमें किरण नहीं। गेलिलिओके पृथिवीमें किरणका अविष्कार करनेसे उनका वह अवलम्ब भी जाता रहा।

गेलिलिओ अपनी दूरबीन आकाशकी ओर चारो ओर घुमाने लगे। चारो ओर नये नये तारोका पता लगने लगा। सुनील नभमण्डलका मेखलास्वरूप 'छाया पथ' जोकि कविकल्पनासे स्वर्गीय देवाताओंका राजवर्त्म प्रसिद्ध हो रहा था गेलिलिओके यन्त्र की सहायता से छोटे छोटे असंख्य ताराओं का समष्टि प्रत्यक्ष हुआ। कोई कोई तारा आँखोंसे एक दिखाई देते थे गेलिलिओके दूरबीनसे वे दो दो तारे दिखाई पडे।

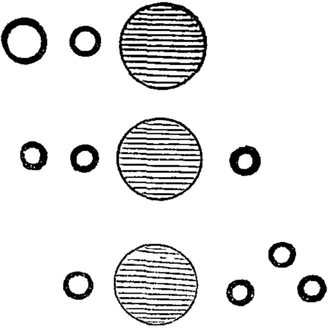
बृहस्पतिका उपग्रह।

१६१० ईसवीके जनवरी महीनेमें वे बृहस्पतिग्रह (Jupiter) को बड़े ध्यानसे देखने लगे। ७ वीं जनवरीको उन्होंने उसके पास तीन छोटे छोटे तारे देखे। उनमेंसे दो तारे बृहस्पतिके



बाँये ओर तीसरा दक्षिणमें था। दूसरी रातको देखा कि तीनों तारे उसके दक्षिण आ गये हैं। ९ वीं तारीखको आकाश मेघाछन्न था और इसलिए कुछ दिखाई न पड़ा। १० वीं तारीखको गेलिलिओने देखा कि दो तारे प्रकाशित हैं और दोनों ही बृहस्पतिकी बाँई ओर हैं। ११ वीं तारीखको भी वे दोनों तारे बृहस्पतिकी बाँई ओर ही थे, पर उनमेंसे एक बड़ा दिखाई देता था।

वृहस्पतिग्रहके उपग्रहोंका आविष्कार ।



वृहस्पतिग्रहके उपग्रहोंका आविष्कार ।

१२ वीं तारीखको फिर तीन दिखाई पडे, ७ वीं जनवरी की तरह दो बाँई ओर और एक दाहिनी ओर था। इसके दूसरे दिन गेलिलिओने इस प्रकार चार तारे देखे। इस तरह चार से अधिक तारे दिखाई न पडे । गेलिलिओने अब यह प्रचार किया कि जैसे पृथिवीके चारों ओर चन्द्रमा घूमता है उसी प्रकार वृहस्पति ग्रहके चारों ओर चार उपग्रह वा चन्द्रमा घूमते हैं। पृथिवी जैसे ग्रह है और उसके उपग्रह हैं, उसी प्रकार वृहस्पति भी एक ग्रह है और उसके उपग्रह हैं। यह

परीक्षित सच्ची बात फैलनेपर उस समयके विद्वानोंमें तुमुल आन्दोलन उपस्थित हुआ। यह भी कभी हो सकता है? अनेकों ने ही विश्वास नहीं किया। इसे बातका विश्वास करनेसे बाइबलका उपदेश झूठा होता है; प्रचलित प्राचीन मत छोड़ना पडता है, पृथिवी ही इस जगत्का मूलाधार है,—वे यह कैसे विश्वास करें कि पृथिवीकी तरह अन्तत: एक और ग्रह विद्यमान है।

गेलिलिओने अपनी दूरवीनसे अपने आविष्कृत उपग्रहों का घूमना देखनेके लिए सबका आह्वान किया। किसी किसी ने अपनी आँखोंसे देखनेपर भी कहा कि यद्यपि दूरवीनसे पृथिवीकी चीजें ठीक दिखाई पडती हैं, तथापि उससे आकाश-मार्गका रहस्य नहीं प्रकट हो सकता। किसी किसीने देखना ही स्वीकार नहीं किया। इस प्रकारके एक व्यक्तिकी मृत्यु होने पर गेलिलिओने रहस्य—छलसे कहा था—"मुझे आशा है, वे स्वर्ग जाते समय मार्गमें उनको देख गये होंगे।"

शुक्र ग्रहकी क्षय-वृद्धि।

इन सब अश्रुतपूर्व आविष्कारोंके बाद गेलिलिओके मनमें इन सुन्दर अनन्त ज्योतियोंकी स्थिति और गतिके रहस्यका उद्घाटन करनेकी वासना क्रमसे बलवती होने लगी। चारों ओरका अविश्वास उनको निरुत्साहित न कर सका। बल्कि उनका उत्साह दूना बन गया। उनकी असाधारण प्रतिभा और मानसिक बल उनको अपने आरब्ध कार्योंको सुसम्पन्न करने के लिए समधिक प्रोत्साहित करने लगा। उन्होंने और एक परीक्षामूलक आविष्कारके द्वारा अपने शत्रुओंका आशा-

भरोसा नष्ट कर दिया। उन्होंने पहले ही शुक्र (Venus) की परीक्षा कर देखा था कि वह गोलाकार है। एक दिन उन्होंने विस्मयके साथ देखा कि वह तृतीया या चतुर्थीके चन्द्रमाके पतले फलककी नॉई दिखाई देता है। इसके बाद वे नित्य रात को शुक्रके परिवर्तनकी परीक्षा करने लगे। क्रमसे वह फलक की आकृतिसे पूर्णचन्द्रकी तरह गोली आकृतिका हो गया। उस समय उनके आनन्दका पार न रहा। इससे आपत्ति रहित यह प्रमाणित होता है कि शुक्र ग्रह भी पृथवीके साथ सूर्यके चारों ओर घूमता है।

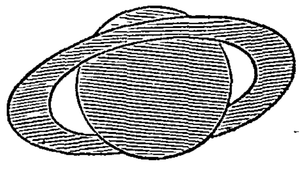
कोपर्निकस पहले ही भविष्य कह गये थे कि यदि मनुष्य की दृष्टिशक्ति अच्छी तरह बढ़ जाय तो दिखाई पड़ेगा कि शुक्र और मंगलग्रह चन्द्रमाकी तरह घटते-बढ़ते है। गेलिलिओ ने परीक्षाके द्वारा इस भविष्यवाणीको प्रमाणित किया। विरोधियोंने इस नये प्रमाणपर विश्वास नहीं किया, बल्कि गेलिलिओपर उनका क्रोध बढ़ने लगा। उन्होंने देखा कि यदि गेलिलिओका मत स्वीकार करना पड़ा तो पृथिवीको अनन्त ज्योतियोंमें अत्यन्त छोटा मानना पड़ेगा। किन्तु बहुत समय से वे जानते आ रहे हैं कि पृथिवी ही जगत्का केन्द्रस्थल है, ये अगणित तारे रातमें पृथिवीको प्रकाश देने के लिए ही रचे गये है। इस बड़े मतका परिवर्तन सहजमें ही कैसे हो सकता था?

शनिवलय (Saturn's Ring)

इसके बाद गेलिलिओने शनिग्रह की ओर अपना यन्त्र घुमाया। इन्होंने शीघ्रही आविष्कार कर डाला कि यह ग्रह

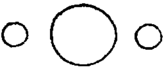
एक तारा मात्र नहीं है, उसके दोनों ओर और भी दो छोटे छोटे तारे हैं। पीछे जाना गया कि ये दोनो तारे नहीं, ये दोनों उस गोले वलयके केवल प्रान्त भाग हैं जो इस ग्रहके

शनिवलय



चारों ओर है। गेलिलिओका दूरवीक्षण यन्त्र बहुत उत्कृष्ट न था और इसलिए समग्र शनिवलय उनको न दिखाई पडा। १६५६ ईसवी में प्रसिद्ध ज्योतिषी हिउजेंसने बृहत्तर दूरवीक्षण यन्त्रसे समग्र शनिवलयका आविष्कार किया।

गेलिलिओ द्वारा देखा गया शनिवलय



ये सब अश्रुतपूर्व अचिन्तनीय आविष्कार गेलिलिओने एक वर्ष के भीतर ही कर डाले। इसी एक वर्ष में परीक्षामूलक ज्योतिषकी कैसी शीघ्र उन्नति हुई यह उपर्युक्त आविष्कार-वृत्तान्त पढने से अच्छी तरह समझ पडेगा। उनके विरोधियो के विश्वास न करनेपर भी बहुतसे छात्र उनके शिष्य बन गये।

युरोपमें सर्वत्र उनका आविष्कृत दूरवीक्षण यन्त्र तैयार होने लगा और विभिन्न देशोंके ज्योतिषी गेलिलिओका आविष्कार अपनी अपनी परीक्षाओंके द्वारा प्रमाणित करने लगे। क्या प्रबल जलप्लावनके स्रोतको बालू रोक सकती है?

सूर्य-कलङ्क (Sun-spots)

इसके बाद दूसरे साल सन् १६११ में गेलिलिओने सूर्यकी ओर अपनी दूरबीन घुमाई। हाय! हाय! गेलिलिओ तुमने क्या किया? जो सूर्य कविकल्पनाके अनुसार देवताके आसनपर आसीन है, जो सात घोड़ोंके रथपर चढ़कर प्रातःकाल पूर्व दिशामें उदित होकर प्रबल प्रतापपूर्वक रथके पहियोंके शब्दसे नभोमण्डलको प्रतिध्वनितकर घूमते घूमते शामको अपने स्थानपर पहुंचता है, जिसकी पूजा, होम, तप, अत्यन्त प्राचीन युगसे अब भी पृथिवीके नाना स्थानोंमें प्रचलित है, उसकी ही ओर अपने छोटे यन्त्रको घुमानेका साहस तुमने किया? तुम्हारे विरोधी यदि तुम्हें एकबारगी मार न डालें तो हम लोग उनको अत्यन्त दयालु कह कर उनकी प्रशंसा ही करेंगे। गेलिलिओने परीक्षा करते करते सूर्यमें कितने ही दाग या कलङ्क (Sun-spots) देखे। हर वक्त ये दाग एकसा नहीं रहते, कभी कभी कितने ही गुँथ कर एक हो जाते हैं, कभी एकसे भी अनेक हो जाते हैं। केवल इन दागोंका ही आविष्कार कर गेलिलिओ शान्त न हुए। उन्होंने देखा कि ये दाग क्रम क्रमसे लुप्त होकर फिर अट्ठाईस दिनके बाद दिखाई पड़ते हैं। इसके द्वारा उन्होंने सहज ही प्रमाणित किया कि अट्ठाईस दिनमें सूर्य अपने मेरुदण्डपर एक बार घूम आता है।

गेलिलिओका विचार।

अबतक हमने गेलिलिओके वैज्ञानिक आविष्कारोंका वृत्तान्त लिख कर आनन्द उठाया है। अब गेलिलिओके दुःखपूर्ण जीवन-वृत्तान्तका परिचय दे आँसूभरी आँखोंके साथ उनकी पुण्यमय स्मृतिसे विदा लेना होगा।

१६१० ईसवी तक, अर्थात् अट्ठारह वर्षतक वे पदुयामें थे। यहीं उन्होंने दूरबीनका, चन्द्रमण्डलमें पर्वतोंके होने का, बृहस्पति ग्रहके उपग्रहोंका, आविष्कार किया। क्रमसे इन सब गवेषणाओंमें दिन रात उनका मस्तिष्क और मन इतना व्यस्त रहने लगा कि विश्वविद्यालयमें वक्तृता देनेमें उनका मन न जुटने लगा। इस समय वे यही चिन्ता करने लगे कि अपना सारा वक्त विज्ञानकी सेवामें कैसे लगा सकें। इसी समय उनके ही शिष्य और बन्धु टास्कानीके ग्राण्ड ड्यूक कास्मो द्वितीय (Cosmo II) ने अपनी राजधानी फ्लारेन्समें आनेके लिए उन्हें बुला भेजा। गेलिलिओका जन्मस्थान पिसा नगर था जो फ्लारेन्सके बहुत सन्निकट और राजधानीके अन्तर्गत था। इसलिए उन्होंने इस निमन्त्रणको सादर स्वीकार किया। किन्तु फ्लारेन्स जाना उनके लिए चाहे कैसा ही सुविधाजनक क्यों न रहा हो, पर पदुया नगर छोड़कर उन्होंने बड़ी भूल की। कारण टास्कानी रोमन कैथलिक धर्मके एकछत्र राजा पोपकी क्षमताके अधीन था। इधर वेनिस राज्य प्रजातन्त्र द्वारा शासित था और पोपकी क्षमताके विरुद्ध था। पदुया नगर इस वेनिस राज्यके अन्तर्गत था, और इस लिए वे माताकी गोदमें किलकते हुए बच्चेकी तरह

निरापद थे। पदुया छोडनेके बादसे ही वे पोप की क्षमता के अधीन हो गये। उनके बन्धुबान्धवोंने बहुत कुछ उपरोध-अनुरोध किया, किन्तु पदुयामें रहना उन्होने किसी तरह भी मजूर न किया। "नियत केन बाध्यते" ?

फ्लारेन्स जाकर गेलिलिओने पहले पहल बहुत शान्ति पाई। उनकी ख्याति युरोपमें चारों ओर फेल गई, राजद्वारमें उनके सम्मानकी सीमा न थी। रुपये-पैसेकी भी कमी न थी। यहाँ छात्रोंके लिए वक्तृता न देनी पडती थी। वे जो चाहते थे वही हुआ।

किन्तु क्रमश उनके विरोधी उनके मतोकी ओर पोपकी दृष्टि आकर्पित करनेकी चेष्टा करने लगे। अब गेलिलिओ पदुयामें नही थे, इसलिए उनके सम्बन्धके प्रश्न फ्लारेन्ससे रोम अनायास ही पहुँचने लगे। पोपसे यह बात कही गई कि वे अपने मतको पुष्टकर ईसाई धर्मके विरुद्ध काम करते हैं। अन्त में १६१५ ईसवीमें पोप पञ्चम पालने उनको रोम जाकर अपने कार्य पोपको दिखाने के लिए आदेश दिया। वे रोम जाने के लिए तैयार होने लगे, दूरबीन यन्त्र आदि भी साथ ले लिये। रोम पहुँचकर अपने यन्त्रोंके द्वारा सबको ग्रह-उपग्रहादि दिखाने लगे। एक दिन स्वय पोपसे मिलकर एक घटा वार्तालापकर उनको अपने आविष्कार समझा दिये। पोपने उन पर किसी प्रकारका असन्तोष प्रकट न किया। गेलिलिओने खयाल किया कि अब उनका सौभाग्यसूर्य चमका। वे और भी कुछ समय रोममें रहकर सबको अपना मत समझानेकी चेष्टा करने लगे। इससे उनके विरोधी अनेक उच्चपदस्थ धर्मयाजक धीरे धीरे उन

पर खड्गहस्त हो गये । अब पोपको इस प्रश्नकी मीमांसा करनेके लिए दबाने लगे कि कोपर्निकसका मत बाइबलके विरुद्ध है या नहीं। इस प्रश्नकी मीमांसा जाननेके लिए गेलिलिओ रोममें विलम्ब करने लगे। वे जानते न थे कि उनका यहाँ रहना अब असह्य हो उठा है। वे अपने नये मत के द्वारा ऐसे अनुप्राणित हो उठे थे कि वे यह समझ न सके कि उनके लिए कौन सा मार्ग श्रेयस्कर है। अन्तमें निश्चित हुआ कि कोपर्निकसका मत बाइबलके विरुद्ध है। कोपर्निकस और केपलरके ग्रन्थोंका प्रचार बन्द करनेके लिए आज्ञा हुई। गेलिलिओकी आज्ञा हुई कि वे पृथिवीकी सचलता न समझाने पायेंगे। गेलिलिओ भग्न हृदय हो फ्लारेन्स लौट आये। वे आरभमें धर्मद्वेषी न थे। अपना मत बाइबलके किसी अशके विरुद्ध होनेसे स्वय भी दुखी थे, किन्तु सत्यका परित्याग कैसे करें ?

जो हो, गेलिलिओ रोमसे वापस आकर बहुत कुछ शान्तिके साथ समय बिता रहे थे। १६२३ ईसवीमें पुराने पोपने इहलीला संवरण की। कार्डिनल बारबेरिना उन्हींके एक बन्धु सप्तम आर्बानके नामसे पोपके पदपर अभिषिक्त हुए। यह देखकर गेलिलिओ बहुत कुछ निश्चिन्त हुए और उन्होंने ऐसी आशा भी की कि उनके सम्बन्धमें पूर्व पोपकी आज्ञा उठा ली जायगी। अपने बन्धुकी पदोन्नतिपर आनन्द प्रकट करनेके लिए वे रोम गये। वहां नव पोपकी बातोंसे बहुत सन्तुष्ट हो अपने घर लौटे।

सन १६३२ में नये पोपके अनुग्रहपर निर्भर हो उन्होंने "टालेमी और कोपर्निकसके ज्योतिषसम्बन्धकी

३—घरके भीतर ले जाकर निर्यातनोपयोगी यन्त्र दिखाना।

४—कपडे आदि खुलाकर अपराधीको निर्यातनयन्त्रसे बाँध देना।

५—निर्यातन-क्रिया

इस प्रकार निर्यातन क्रिया के बाद भी यदि अपराधी अपना अपराध न स्वीकार करे और अनुतप्त न हो तो निम्नलिखित चरम दण्ड उसे दिया जाता था।

(६) कई वर्षो के लिए कैद रखना।

(७) आगमें जीते जी जला देना।

२१वीं जूनको गेलिलिओ इस भयानक विचारालयके समक्ष उपस्थित हुए और २४ वीं तारीखको इस स्थानसे बाहर निकले। इस विचारके समय जनसाधारण न जाने पाते थे और अपराधीको भी सब बाते गुप्त रखनेकी प्रतिज्ञा करनी पडती थी। विचारालयके कागज पत्र भी लोगोंको न दिखाये जाते थे। इसी लिए ये तीन दिन गेलिलिओको प्रकृत निर्यातन सहना पडा था या नही यह जाननेका कोई उपाय नहीं। आशा है, विचारकोंने इस पुण्यश्लोक वैज्ञानिकश्रेष्ठ वृद्धको निर्यातनकी आज्ञा दे अपनी रसना कलङ्कित नहीं की। इसी समय दारुण दुश्चिन्तासे उनका शरीर और मन एकबारगी भग्न हो गया फिर भी उनकी स्नेहमयी कन्या वश्यता स्वीकार करनेके लिए बार बार अनुरोधपूर्वक सन्देसा भेजने लगी। नाना कारणोंसे गेलिलिओ और अधिक यन्त्रणा न सह सकने पर विचारकोंसे कहा — "आपलोग मुझे जो कहनेके लिए

आज्ञा देंगे मैं वही कहने के लिए तैयार हूं ।" तब विचारकों ने उनके लिए निम्न लिखित आज्ञा दी ।

(१) गेलिलिओने पृथिवीकी सचलताके सम्बन्ध में जिस मत और विश्वासका प्रचार किया है उनको उसका प्रत्याहार करना होगा ।

(२) यावज्जीवन नामके लिए कैद रहना पडेगा ।

(३) सात अनुतापसूचक प्रार्थना सगीतोंकी आवृत्ति प्रति सप्ताह करनी होगी ।

कार्डिनल नामके दस उच्च उपाधिधारी धर्मयाजक विचार पति थे । उनमेंसे तीनने विचारालयकी रायपर दस्तखत करना कबूल नहीं किया । शेष सातकी कलङ्कित लेखनीका हस्ताक्षर अब भी उस विचारपत्रपर मौजूद है । गेलिलिओ इस प्रकार पकडे जानेपर बाइबलको छूकर शपथ करनेके लिए बाध्य हुए । "सूर्य जगतका केन्द्रस्थल है और पृथिवी सचला है यह बिलकुल असत्य है । इस विषयमें अबतक जो विश्वास और धारणा थी वह सम्पूर्ण असत्य और धर्मशास्त्र के विरुद्ध है । मैं प्रतिज्ञा करता हू कि भविष्यमें लिखकर या बोलकर किसी तरह इस असत्यका प्रचार न करूंगा ।" बहुतसे लोग कहेंगे कि गेलिलिओको इस तरहकी झूठी प्रतिज्ञाकर अपनी रसनाको कलङ्कित करना उचित न था, बल्कि ब्रुनोकी तरह जलती आगमें आत्मसमर्पण करना ही अच्छा होता । उनसे मेरा यह अनुरोध है कि वे इस हतभाग्य वृद्धकी उम्र और उस समयकी शारीरिक और मानसिक दुर्बलताकी विवेचनाकर जरा करुणाकी आंखोंसे उनकी

ओर देखें, और जो धर्मके नामपर मृत्युकी भीषण मूर्तिक भय दिखा सत्यको बलपूर्वक छिपाना चाहते थे उन सबको यादकर बद दुआ दें।

कहा जाता है कि इस प्रतिज्ञापत्रको पढनेके बाद ह गेलिलिओने उसी जगह अपने एक बन्धुसे चुपकेचुपके कह था — "फिर भी पृथिवी सचल है।" किन्तु यह किम्वदन्त सच नहीं जान पडती। क्योंकि इस विचारालयमें और को व्यक्ति न जाने पाता था।

गेलिलिओका यह प्रतिज्ञापत्र विश्वविद्यालयके छात्रों को पढकर सुनानेके लिए भेजा गया। गेलिलिओकी उस वक्तकी भीषण मानसिक अवस्थाका चित्र चित्रकारकी लेखनी अङ्कित नहीं कर सकती। उनका हृदय लज्जा, रोष, क्षोभ अपमानसे एकबारगी भग्न हो गया था। वे रोममें कुछ दिन रक्खे जाकर सीनानामक स्थानको भेजे गये। वहाँसे उनका अपने देहाती घरको, आरसेत्री नामक स्थानको, जाने की आज्ञा मिली। यहाँ उनकी स्नेहमयी कन्या उनकी सुश्रूष करने लगी। किन्तु विधाताने गेलिलिओको बुढापेमें कन्या का शोक भी सहाया। छ दिन भी बीतने न पाया था कि उनकी स्नेहमयी कन्या वृद्ध पिताकी गोदमें सिर रखकर अनन्त निद्राके वशीभूत हो गई।

अपमानित भग्नहृदय जराग्रस्त गेलिलिओका दिल फिर भी कामसे न मुडा। अवरुद्ध अवस्थामें हीं उन्होंने गतिशील द्रव्यकी गति सम्बन्धी तीन नियम (Laws of motion) स्पष्ट और ठीक तौरसे लिख कर एक पुस्तक लिख डाली।

इस दृष्टिसे यह ग्रन्थ ही उनका श्रेष्ठ वैज्ञानिक ग्रन्थ है। युवावस्थामें उन्होंने पेण्डुलमके समगतित्व और पतनशील द्रव्योंके गति सम्बन्धी नियमों (Laws of falling bodies) का आविष्कार किया था और अब गतिशील द्रव्योंकी गतिके नियमोंका आविष्कार कर वे गतिविज्ञान (dynamics) का जन्म दे गये। यद्यपि यही शेषोक्त नियम इङ्गलैण्डके सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक आकर्षणके आविष्कर्ता निउटन के द्वारा सम्यक् रूप से आलोचित हो कर उनके नामसे ही प्रचलित हैं किन्तु यह गेलिलिओके इस ग्रन्थसे लिया गया है इसमें सन्देह नहीं। इस अमूल्य ग्रन्थको स्वयं प्रकाशित करनेके लिए गेलिलिओ को साहस नहीं हुआ। उनके किसी छात्रने उसे हालैण्ड ले जाकर छिपे तौरसे प्रकाशित किया। गेलिलिओ केवल परीक्षा-मूलक ज्योतिषके ही जन्मदाता नहीं, वे गतिविज्ञानके भी प्रतिष्ठाता हैं, इसका पता इस ग्रन्थ से लगता है।

विधाता महापुरुषकी परीक्षा विपदके समय ही करते हैं। इसीसे देखते हैं भगवानने भक्तबालक ध्रुवकी विमाताके निर्यातनके समय परीक्षा ली, प्रह्लादकी भक्ति विष पीनेमें, आगमें जलानेमें, समुद्रमें फेकनेमें, आदि यावतीय विपदके समय अटूट रहती है या नहीं इसकी बार बार परीक्षा ली। मालूम होता है गेलिलिओकी परीक्षा अब भी समाप्त नहीं हुई, इसीसे उन्होंने गेलिलिओकी दृष्टिशक्ति भी छीन ली। पहले एक आँख फूल उठी। अनन्तर उसकी दृष्टिशक्ति चली गई। अन्तमें दोनों आँखोंसे अन्धे हो गये। इस समय वे निश्चय ही स्वर्गीय कवि रजनीकान्तकी मर्मस्पर्शी भाषामें भगवानसे मन ही मन प्रार्थना करते थे — "आमाय सकल रकमे गर्व्व करेछो गर्व करिते चूर।"

उन्होंने इसी समय अपने एक बन्धुको लिखा था "तुम्हारा प्रियबन्धु इस समय बिलकुल अन्धा हो रहा है। से यह चराचर विश्व, यह अनन्त नभोमण्डल, जिसके सम्ब का ज्ञान मैं अपने अश्रुतपूर्व आविष्कारोंके द्वारा शतस गुण बढ़ा सका हूं, मेरे निकट एकबारगी अदृश्य है। यही भगवानकी इच्छा है तब मैं भी इससे सन्तुष्ट हूं।" इसी अ अवस्थामें उनके शिष्य उनकी सेवा करते थे। इङ्गलैण्ड महाकवि मिल्टनने भ्रमण करनेके लिए इटली आकर इ समय गेलिलिओसे भेट की। उस समय उनकी अवस्था के उनतीस वर्ष की थी। वृद्धावस्थामें जब वे भी अपनी अ कविताओं को लिखने के लिए अपनी कन्याओंको कहते तब निश्चय ही इटलीके इस ऋषिकल्प अन्ध वैज्ञानिक चित्र उनके दृष्टि पर अङ्कित होता था।

अन्तमें उनकी मुक्तिके दिन दिखाई पड़े। अठहत्तर की उम्रमें सन् १६४२ की ८वीं जनवरीको उनका अ आत्मा नश्वरदेहको छोड़कर स्वर्ग सिधारा। गेलिलि मृत्युकी शीतल गोदमें विश्राम पाकर जीवनकी सब ज्वा यन्त्रणासे मुक्त हुए। मृत्युके बाद भी उनके वैरियोंने पर कृपाकटाक्ष न किया। पहले उन लोगोंने उनका पृथिवं यथारीतिसे समाद्दार न होने देनेकी चेष्टा की। उसमें अ कार्य होकर उनका स्मारकस्तम्भ बनवानेका घोरतर विरो किया। ये अदूरदर्शी मूर्ख समझ नहीं सके कि वे अपने हाथ ही अश्रुतपूर्व वैज्ञानिक आविष्कारोंके द्वारा ऐसा अतुलनी अनिन्द्यसुन्दर स्मारकस्तम्भ खड़ा कर गये हैं कि जिस ज्योतिसे चिरदिन दिग्दिगन्त प्रकाशित होता रहेगा।

तीसरा परिच्छेद

लेवोसिये ।

एक फरासीसी रासायनिक कह गया है—"रसायनशास्त्र फरासीदेशीय शास्त्र है। उसके जन्मदाता अमरकीर्तिसम्पन्न लेवोसिये हैं। यह उक्ति अत्युक्ति अथवा स्वदेशहितैषणाप्रेरित नहीं। असलमें ही यदि नव्यरसायनका जन्मदाता कोई कहा जा सकता है तो निसन्देह वह फरासीसीदेशके प्रसिद्ध पंडित लेवोसिये हैं। प्राचीन रसायन-जगत्में उन्होंने जो विप्लव पैदा किया था, जिस तरह भ्रान्त धारणाको हटा कर सत्यका प्रकाश फैला समग्र यूरोपके वैज्ञानिक समाजको नवीन मार्ग दिखलाया था उससे उनको नव्यरसायनका जन्मदाता कहे विना नहीं रहा जाता। बडेही आक्षेपकी बात तो यह है कि इन महापुरुषको उन्मत्त फरासी विप्लवके समय अकालमें ही प्राणदण्ड दे दिया गया। उसी समय एक दर्शकने कहा था—"इस प्रकार के एक मनुष्यका मस्तक काटनेमें एक मुहूर्त भी नहीं लगा, पर इस प्रकारका मस्तक सौ वर्षमें भी पैदा होगा या नहीं, यह सन्देहकी बात है।

एंटन लोरां लेवोसिये (Antion Lauront Lovoisier) का जन्म १७४३ ईसवीके २६ अगस्तको फ्रांसके सुप्रसिद्ध राजधानी पेरिस नगरमें हुआ था। इङ्गलैण्डके सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक गणितशास्त्रवेत्ता विश्वाकर्षणके आविष्कर्त्ता निउटन

के ठीक एक सो वर्ष बाद लेवोसियेका जन्म हुआ। पाँच व
की अवस्थामें ही उनको मातृवियोग सहना पडा। उनके पि
धनाढ्य थे। उन्होंने पुत्रको शिक्षा देनेमें कोई त्रुटि न क
यहाँ यह कह देना आवश्यक है कि अनेक वैज्ञानिक महापु
बाल्यकालमें ऐसे सौभाग्यशाली न थे, अनेकोंको अर्थाभाव
कारण विद्याशिक्षाकी सुविधा प्राप्त न हुई थी। अनन्तर
अपनी ही साधनाके बलसे वैज्ञानिक गवेषणायें कर प्र
हो गये हैं। लेवोसियेने प्रसिद्ध गणितशास्त्रज्ञके पास गणि
शास्त्र, उद्भिद्‌विद्या और प्राचीन रसायनशास्त्र सीखा थ
रसायनाध्यापक प्रसिद्ध राउलके अध्यापनसे लेवोसिये
दृष्टि रसायनशास्त्रकी ओर आकर्षित हुई। अध्यापक राउल
अध्यापन पद्धति समग्र फ्रांसमें प्रसिद्ध थी और लेवोसिये
समसामयिक अनेक प्रसिद्ध रासायनिक उनके शिष्य थे
लेवोसियेके पिताकी इच्छा पुत्रको कानून पढाने की थ
२१ वर्षकी अवस्थामें लेवोसियेने कानूनकी परीक्षा पास
ली। किन्तु विज्ञान सीखनेकी ओर उनका स्वाभाविक आ
था। इसलिए उन्होंने आईन व्यवसायकी वासना त्याग
विज्ञान चर्चामें जीवन उत्सर्ग करना स्थिर किया।

इसी समयसे उनकी रासायनिक गवेषणाओंका आर
हुआ। बाईस वर्षकी अवस्थामें उन्होंने अपना पहला प्रब
लिखा। इसके बाद दूसरे वर्ष उन्होंने "बडे नगरको आलोकि
करनेका उपाय' नामका एक प्रबन्ध लिख फरासी एकाडे
के वैज्ञानिक परिषदसे एक स्वर्णपदक प्राप्त किया और इ
वर्ष उक्त परिषदके सभ्य निर्वाचित हुए।

फ्रान्सदेशमें ज्योतिष, भूविद्या, रसायन आदि शास्त्र
प्रसिद्ध पण्डित ही इस परिषदके सभ्य थे। उनके ससं

पढनेसे युवक लेवोसियेका आग्रह मौलिक अनुसधानकी ओर बहुत बढ़ गया। मौलिक गवेषणाकी प्रवृत्ति ठीक सक्रामक व्याधिकी तरह काम करती है। जैसे कोई सक्रामक व्याधि एक शरीरसे दूसरे शरीरमें पहुंच जाती है, उसी तरह ससर्ग के गुणसे नवागत साधककी साधना प्रवृत्ति स्वत ही उत्तेजित हो उठती है। इस आकाक्षाने जिसके हृदयमें एक बार स्थान पाया है, वे अनन्यकर्मा हो गवेषणा कार्यमें प्रवृत्त हुए बिना न रह सके। इसी कारण देखा जाता है कि एक ओर बड़ी ऊँची ऊँची उपाधि धारण करनेवाले युवक इस प्रकार की आकाक्षासे अनुप्राणित न हो सकनेके कारण साधनाके मन्दिरसे विदा हो गये हैं, दूसरी ओर अनेक भाग्यवान युवक अल्पशिक्षित होनेपर भी ससर्गगुणसे ज्ञानार्जनकी अतृप्त आकांक्षासे व्याकुल हो साधनाके पथकी ओर अग्रसर हुए हैं।

फरासीसी एकाडेमीके सभ्य हर साल नाना विषयोंका विवरण प्रकाशित करते थे। लेवोसियेकी असामान्य प्रतिभा और नाना शास्त्रोंमें पारदर्शिता देख कर एकडेमीके अधिकारियों ने उनपर ही सब विवरणोंके प्रकाशित करनेका भार रख दिया। उन्होंने कई वर्षोंमें भिन्न भिन्न विषयोपर दो सौ विवरण लिखे हैं। इस प्रकारसे फरासीसी एकाडेमीसे उनका सम्बन्ध स्थापित हुआ। इस सम्बन्धकी उन्होंने आजीवन रक्षाकी। घोर फरासीसी विप्लवके समय जब सब विद्वत् समाज बन्द करनेका प्रस्ताव चल रहा था उस समय भी उन्होंने एकाडेमीकी पुत्रवत् रक्षा करनेकी चेष्टा की थी, अपने धनसे प्राचीन जराजीर्ण वैज्ञानिकों की मासिक वृत्ति देकर एकाडेमीको बचा रक्खा था। अन्तमें

उनकी सब चेष्टा व्यर्थ गई। उनके जीतेजी ही राजाज्ञासे फरासीसी एकाडेमीका अस्तित्व उठ गया।

लेवोासियेको रुपये पैसेकी कमी न थी। माताकी मृत्युके बाद वे बहुत बड़ी सम्पत्तिके अधिकारी हो गये थे। इस कारण सबने आशा की थी कि वे रुपया कमानेकी चेष्टामें न उलझकर अनन्यमनसे वैज्ञानिक गवेषणामें जुटे रहेंगे। किन्तु भवितव्यताने यह न होने दिया। ज्योंही उन्होंने विज्ञानके मन्दिर में एक पाँव रक्खा त्योंही उनका दूसरा पाँव फाँसीकी लकड़ी की पहली सीढी पर जा पडा। वे फरमिये जनरल (Fermier General) हुए। उस समय फ्रांसमें जो लोग राजस्व और वाणिज्य शुल्क-संग्रह करते थे वे फरमिये जनरल कहे जाते थे। वे कुछ तालुकोंका इजारा ले लेते थे और सरकार को छ वर्षका राजस्व एव वाणिज्य-शुल्क पेशगी देते थे। निर्दिष्ट राजस्वके सिवा और भी कुछ रुपया राजा और राजकर्मचारियोंको भेट करना पडता था। फल यह होता था कि दरिद्र प्रजापर यथेष्ट अत्याचार हुआ करता था। अत्याचार उत्पीड़न से तग आकर प्रजा सरकारसे फरयाद करती थी, पर इंसाफ न होता था। बल्कि निर्दिष्ट राजस्व न दे सकनेपर सजा दी जाती थी। प्रजा फरासीसी देशमें सर्वत्र ही इस प्रथाको मार्मिक घृणाकी दृष्टिसे देखती थी। इनमें सद्व्यक्ति भी थे। लेवोासियेने जमींदारीका भार ग्रहणकर इलाकेमें सुशृङ्खला और सुविचार का बन्दोबस्त किया, और वैज्ञानिक कृषि प्रणाली प्रवर्त्तित की। और और देशोंसे भेड-बकरियाँ लाकर पशुओंकी सख्या बढ़ाने लगे। किन्तु उनको भी उत्पीडित जनसाधारणने घृणाकी दृष्टिसे देखा।

लेवोसियेका जीवन दो प्रकारके कार्योंमें बीता—था प्रथम विज्ञानसेवा, द्वितीय देशसेवा। देशके नाना मंगलमय कार्योंके वे अगुवा थे, राजकीय विविध कार्योंमें वे राजाकी सहायता करते थे। विशेषत वे एक वक्त सरकारी बारूदखानेके अध्यक्ष थे, और उन्होंने बारूद और तत्संक्रान्त अन्य द्रव्योंके तैयार करनेकी प्रणालीकी उन्नति की थी। यदि वे अनन्यमनसे विज्ञान की सेवा करते, अपनी समग्रशक्ति विज्ञानकी सेवामें लगाते, तो वे रसायनशास्त्रको नहीं मालूम कितनी उन्नति कर सकते। जब वे चारो ओरसे विपत्तिसे घिर गये तब उन्होंने राजनीतिके कोलाहलपूर्ण कर्मक्षेत्रसे विदा ले विज्ञानागारके चिरशीतल श्यामल स्निग्ध छायामें सम्पूर्ण रूपसे आश्रय ग्रहण करनेका एकान्त आग्रह दिखाया था। किन्तु उनके शत्रुओंने उनका पीछा न छोड़ा।

सन् १७६४ ईसवीके मई महीने में उनपर और और भी सत्ताईस फरमिये ,जनरलोंपर राजस्व खा जानेका अभियोग लगा। लेवोसिये जिन जिन अपराधोंके कारण राजद्वारमें अभियुक्त हुए थे उनमें तमाखूमें जल और अस्वास्थ्यकर पदार्थ मिलानेका अपराध अन्यतम था। जिस भीषण राष्ट्रविप्लवके समय पिता पुत्रको भूल गया था, भाई भाईका सिर काटनेमें जरा भी कुंठित न हुआ था, उस समयमें तमाखूमें जल मिला देना यदि अपराधमें गिना गया तो इसमें विचित्रता क्या है? विचारपति काफिनाल इन अट्ठाईस हतभाग्योंका विचार कर रहे थे। उसी समय उनके वैज्ञानिक गवेषणाओं और देशहितकर कार्योंके कारण उनको मुक्त करनेके लिए बहुतसे गण्यमान्य लोगोंके हस्ताक्षरसे एक प्रार्थनापत्र विचार-

पतिके समक्ष पेश हुआ। उनकी ओरसे उनके वकीलने जो अर्जी पेशकी थी उसमें लेवोसियेने अपनी आरंभ की हुई एक वैज्ञानिक गवेषणाको पूर्ण करनेके लिए समय प्रदान करनेकी प्रार्थना की थी। कफिनालने उन सब प्रार्थनापत्रोंकी ओर कुछ भी ध्यान न देकर कहा था—'फरासीसी साधारणतन्त्रमें वैज्ञानिककी जरूरत नहीं, न्यायविचार होना ही यथेष्ट है। इन अट्ठाईस हतभाग्यों को प्राणदंडकी सजा देनेकी उनको इतनी फिक्र थी कि वे जल्दी जल्दीमें जूरियों की राय लिखना भी भूल गये थे। भवितव्य बडा प्रबल होता है। कई महीनोंके बाद काफिनाल अभियुक्त हुए और अपने भ्रमके कारण जूरियों की राय न लेने से ही उनको प्राणदंडकी सजा हुई। दूसरे दिन ये अट्ठाईस जन वध्यभूमिपर लाये गये। लेवोसियेने अपने ससुरका सिर कटते देखा। उन सबने ऐसी स्थिरता और गंभीरतासे दण्ड ग्रहण किया कि उपस्थित जनता देखकर चकरा गई। उसने कोई भी अपमानसूचक वाक्य नही सुना।

इस प्रकार ५१ वर्षकी अवस्थामें आधुनिक रसायनके जन्मदाता लेवोसियेने घातकोंको अपना प्राण समर्पित किया। उनकी अकाल-मृत्युसे समग्र यूरोपका विद्वत्समाज लज्जित, क्षुब्ध और दुःखित हुआ था। कुछ दिन बाद रोबेस्पियरके पतनसे फरासीसी देश के जनसाधारण अपनी भूल समझ सके। दूसरे वर्ष लेवोसियेकी पुण्यकृतिका सम्मान करनेके लिए सरकारकी ओरसे बडे आयोजनके साथ उनकी अन्त्येष्टि क्रिया हुई थी। लेवोसियेकी मृत्युके पीछे उनकी पत्नीने

काउण्ट रमफर्ड नामके एक दूसरे प्रसिद्ध वैज्ञानिकसे विवाह कर लिया।

लेवोसियेने नवीन रसायनशास्त्रकी सृष्टि कैसे की थी, इसको अच्छी तरह समझनेके लिए, उस समयकी रसायनशास्त्र की अवस्था बताना और उनके समसामयिक अन्य रासायनिकों के कार्यों की आलोचना करना आवश्यक है। यूरोपमें ग्रीक और अरब विज्ञानके जन्मदाता कहे जाते हैं। भारतके अतीत गौरवके जमानेमें हिन्दू-आचार्य विज्ञानके जिन सब तथ्योंका आविष्कार कर गये हैं उनका परिचय सभ्य जगत् क्रमश पाता जा रहा है। इस विषयमें अनुसंधानके लिए अब भी बहुत क्षेत्र पड़ा है। इस अनुसंधानका गुरुभार अबतक पाश्चात्य पण्डितोंपर था, वह भार क्रमसे हम लोगोंपर आ पड़ा है। इस परिवर्त्तनका फल बुरा नहीं, अच्छा ही हो रहा है। कारण पाश्चात्य पण्डित इस विषयमें चाहे कैसे ही व्युत्पन्न क्यों न हों, पर वे भारतवर्षकी भाषा और आचारसे अनभिज्ञ हैं। इसके सिवा ग्रीकोंपर उनकी स्वाभाविक प्रीति भी कही जाती है। इन सब अनुसन्धानोंके कारण देखा जाता है कि लेवोसियेके प्रतिष्ठित नवरसायनके जन्मके पहले जिस तरह यूरोप और मिश्रमें एक प्राचीनतर रसायन विद्यमान था उसी तरह भारतके उर्व्वर क्षेत्रमें भी उसका बीज अंकुरित हो काल क्रममें, वर्द्धित, पुष्पित और फलयुक्त हो पीछे सूख गया था। अनेक विषयोंमें भारतका रसायनज्ञान उस समयके ग्रीक और अरबीय रसायनज्ञानसे अधिक उन्नतिशाली था। भारतमें नागार्जुन, चक्रपाणि, यूरोपके पारासेलससके कई शताब्दी पहले वर्त्तमान थे।

दो प्रधान विषयोंके उपलक्ष्यसे इस रसायनशास्त्रकी उन्नति हुई थी —एक चिकित्साके लिए औषध-सग्रह करनेके कारण, दूसरे कृत्रिम उपायोंसे निकृष्ट धातुको सुवर्णमें परिणत करनेके कारण, भारत और यूरोप दोनों जगहोंमे ही इस प्रकारसे रसायनशास्त्रकी पुष्टि हुई थी। फिर भी भारतमें चिकित्साही रसायनशास्त्रका मुख्य अवलम्ब था। जबतक ज्ञानकी उन्नतिके लिए रसायनशास्त्रकी चर्चा शुरू न हुई थी तबतक उसकी उन्नति जल्दी न हो सकी। इङ्गलैण्डके सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक रावर्ट वेल कृत्रिम सोना बनानेवालोंके हाथसे रसायनशास्त्रको उवारकर उसको स्वतन्त्र विज्ञानके रूपमें प्रतिष्ठित करनेकी चेष्टा की। उनकी जीवनव्यापी चेष्टासे रसायनशास्त्र, रसायनज्ञानकी उन्नतिके लिए पढा जाता है, और उसकी आलोचना होती है। स्वाधीन चिन्तासे उसकी प्राणप्रतिष्ठा होती है, और मौलिक गवेषणाओंसे उसका कलेवर दिन दिन पुष्ट होता रहता है। इस प्रकारसे प्राचीन रसायनसे नवरसायनके जन्मकी सभावना सूचित होती है।

प्राचीन रसायन में दूसरी त्रुटि यह थी कि वह परिमाणात्मक (quantitative) शास्त्र न था। अमुक पदार्थके साथ अमुक पदार्थको मिला देनेसे अमुक पदार्थ बन जाता है, किन्तु अमुक पदार्थका कितना परिमाण अमुक पदार्थके कितने परिमाणके साथ मिलानेसे कितने वजनका पदार्थ बनता है, इसका निर्णय नहीं। प्राचीनरसायनमें भी रासायनिक प्रक्रियाके समय तराजू उठाने का अधिक रिवाज न था। लेवोसिये एक नव्यतर रसायन शास्त्रकी प्रधान सृष्टि कर सके थे। उसका प्रधान रहस्य यह है कि उन्होंने रासायनिक प्रक्रियामें पद पदपर

तराजूकी मदद ली थी। इस प्रकारसे वस्तुगत शास्त्र परिणामात्मक हो गया।

वस्तु नष्ट नहीं होती।

वस्तु विनष्ट नहीं होती, यह महासत्य प्राचीन दार्शनिकोंने युक्ति द्वारा प्रमाणित किया था। उनके मतानुसार पृथिवीके सब पदार्थ पञ्चभूत द्वारा गठित हैं और नष्ट होनेपर सब फिर पञ्चभूतमें मिल जाते हैं। अर्थात् सृष्टि पञ्चभूतका एकी करण है और विनाश पञ्चभूतमें फिर मिल जाना है। इस प्रकारके प्रमाणसे वस्तुका अविनश्वरत्व स्पष्ट रूपसे समझ पडता है। लैवोसियेने इस अनुमानको तराजूकी कसोटीपर कसकर परीक्षामूलक सत्यमें परिणत किया था। यह पहले ही कहा चुका है प्राचीन समयके लोगोंने तराजूका अधिक उपयोग करना न सीखा था। वे युक्ति, कल्पना और अनुमानके द्वारा सत्यका सधान करते थे। विज्ञान इन सब सत्योंको परिमाणात्मक परीक्षामूलक सत्यमें परिणत करनेकी चेष्टा करता है। इसी परिणात्मक विज्ञानके एक प्रधान प्रतिष्ठापक लैवोसिये थे।

वस्तुकी अविनश्वरता प्रमाणित करनेके लिए लैवोस्सियेने निम्नलिखित परीक्षा की थी। काचके बने हुए एक बडे बकयन्त्र (glass retort) में निर्दिष्ट तोलका टिन या रॉगा डाल कर उसे वालुका यन्त्रमें तबतक गरम किया था जबतक रॉगा गल न गया था। गरमी देनेसे जो वायु बाहर निकल गया उसे उन्होंने सग्रह कर तौला। इसके बाद बकयन्त्रका बारीक मुँह बन्दकर उसे तोला। अनन्तर बकयन्त्रको फिर गरमी देने लगे और क्रमसे रॉगेको भस्म करने लगे। वायु जितनाही

अधिक होगा राँगा उतनाही अधिक परिमाणमें भस्म होगा। जब देखा कि अब राँगाका भस्म और अधिक नहीं होता तब वकयन्त्रको ठढाकर फिर तौला। देखा, उसका वजन न घटा ही है और न बढा ही, ठीक है। यद्यपि राँगभस्म हो गया था, यद्यपि एक रासायनिक क्रिया हो गई थी, तथापि रासायनिक क्रियाके पहले और पीछेका वजन समान ही था।

वकयन्त्र ठढाकर उसका बारीक मुँह फिर खोल दिया और तब देखा गया कि वाहरका वायु उसके भीतर सशब्द प्रविष्ट हुआ। क्यों वायु प्रविष्ट हुआ? राँगने भस्म होते समय भीतरके वायुका कुछ अश खींच लिया था। वकयन्त्रका मुह खोलनेके समय बाहरका वायु उस शून्य स्थानको ग्रहण करनेके लिए सशब्द प्रविष्ट हुआ। लेवोसियेने फिर इस वायुपूर्ण यन्त्रको तौला। देखा, वजन प्राय १० ग्रेन वढ गया है। इसके बाद राँगभस्म और वाकी राँग एक साथ तौल कर देखा कि जितना राँग लिया था उसकी अपेक्षा राँगभसका वजन वढ गया है। राँगभस्मका वजन कितना अधिक वढ गया है? उन्होने देख पाया कि वकयन्त्रके भीतर वायुका वजन जितना घट गया है ठीक उतनाही राँगकी अपेक्षा राँगके भस्मका वजन बढ गया है। गरम करनेके बाद वकयन्त्रका मुँह खोल देनेसे जितना वायु प्रविष्ट हुआ, उसमेंसे वकयन्त्रका मुँह वन्द करनेके पहले आँच देते वक्त जितना वायु बाहर निकल गया था उसका वजन, निकाल देनेसे जितना वजन घट गया था उतना निकलेगा।

तभी देखा गया कि राँगका भस्म वनाते समय कोई नई चीज़ पैदा नहीं हुई। निर्दिष्ट वजन का राँग और निर्दिष्ट वजन

का वायु दोनो सयुक्त हो रॉग भस्ममें परिणत हो गये है। रॉग भस्मका वजन उतनाही है जितना रॉग और वायु का मिलकर था। इस प्रकार सय रासायनिक प्रक्रियाओंमें वस्तुका केवल परिवर्तन होता है, उत्पत्ति या विनाश नहीं होता। सबने ही देखा होगा कि बत्ती जलते, जलते छोटी हो जाती है, मृतदेह श्मशानपर जलकर राख हो जाती है। प्रश्न यह उठता है कि क्या वास्तवमें वत्ती या मृतदेहका विनाश हुआ? सर्षपके समान बीजसे धीरे धीरे बडे बट जैसे वृक्षकी उत्पत्ति होती है। प्रश्न यह है कि क्या किसी नई चीजकी उत्पत्ति हुई? असलमें यह बात नहीं। रासायनिक परीक्षा द्वारा सिद्ध हुआ है कि बाती जलकर वायुके अम्लजनके साथ मिल जल और कार्बोनिक एसिड गैस पैदा करती है, और ये दोनों पदार्थ एकत्रकर तौलनेसे देखा जाता है कि उनका मिलित वजन बत्तीके वजनसे घटता नहीं, बल्कि बढ़ जाता है। बढ जानेका कारण सयुक्त अम्लजनका वजन है। उसी प्रकार मृतदेहको जलानेसे उसका कुछ अंश भस्म हो जाता है, कुछ भाप और गैसमें बदल जाता है। बीजसे अच्छा बडा वृक्ष पैदा होनेसे नई वस्तुकी उत्पत्ति नहीं होती। किसी अज्ञात शक्तिके बलसे बीज चारों ओरसे गैस जल, खाद वायु आदि ग्रहण कर वृक्षमें परिणत होता है। यदि उतना जल, खाद आदि तौला जाता तो देखा जाता कि उनका मिलित वजन वृक्षके वजनके बराबर ही है। असलमें, जगतमें यदि रासायनिक प्रक्रियाके साथ साथ नई वस्तुकी उत्पत्ति और विनाश होता तो वस्तुओं की अधिकता या अल्पतासे जगत्का नाश हो गया होता। वस्तुके अविनश्वरत्व पर ही समग्र रसायनशास्त्र प्रतिष्ठित है।

लेवोसिये इस भित्तिको परिमाणात्मक सत्यमें परिणतकर रसायनशास्त्रको परिणामात्मक शास्त्रमें परिणत कर गये हैं।

फलजिष्टनवाद।

प्राचीन रसायनशास्त्रमें केवल दो प्रधान अनुमान (theory) प्रचलित थे—एक वैशेषिक दर्शनकार कणाद और ग्रीक दार्शनिक डेमोक्राइट्स और एपिकिउरसका परमाणुवाद (atomic theory), और दूसरा परिष्टाटलका चतुर्भूतवाद और हिन्दूदर्शनका उन्नततर पचभूतवाद। १७२० ईसवीमें जर्मनीके सुप्रसिद्ध रासायनिक स्टाल (stahl) ने फ्लजिष्टन-वाद नामके तीसरे अनुमानका प्रचार किया। उसको इस विषयकी जिज्ञासा हुईकी जलनेवाली चीजें जब जलती हैं तब क्या रासायनिक क्रिया होती है? लकडी, कोयला, गन्धक आदि वस्तुएं आगमें छोडनेसे क्यों जलती हैं? लोहा, पारा, रॉग आदि धातुयें जब ताप देनेसे भस्ममें परिणत हो जाती हैं, तब क्या रासायनिक परिवर्तन होता है। इस विषयपर विचार करते करते स्टालने अन्तमें निश्चय किया कि सब जलनेवाली वस्तुओंमें कोई एक ऐसा पदार्थ है जो जलते समय उस वस्तुसे उड जाता है। उन्होंने इस पदार्थका नाम फ्ल-जिष्टन (Phlogiston) रक्खा। जिस वस्तुमें जितना ही अधिक फ्लजिष्टन होता है, वह वस्तु उतना ही अधिक जलती है। उनके मतके अनुसार दहनक्रिया लकडीके जलनेके अनु-सार चाहे जल्दी हो या धातुमारणकी तरह धीरे धीरे हो—जलनेवाली वस्तुसे फ्लजिष्टन अगल होनेके सिवा और कुछ नहीं होता। ऐसा होनेसे धातुभस्म फ्लजिष्टनहीन धातुमात्र

हो जाना है। स्टाल जानते थे कि सीसेका भस्म, राँगका भस्म आदि धातुभस्मको कोयला आदि अङ्गारमूलक पदार्थोंके साथ जलानेसे फिर मूल धातुमें परिणत हो जाते हैं। यह विषय उन्होंने अपने अनुमानकी सहायतासे खूब सरलतासे समझा दिया। उन्होंने वतलाया कि धातुभस्म जब फ्लजिष्टन हीन धातुके सिवा और कुछ नहीं है तब कोयलेकी मददसे उसमें फ्लजिष्टन मिला देनेसे वह फिर धातुमें परिणत हो जायगा।

स्टालके इस अनुमानके अनेक परिपोषक हो गये। अनुमान जबतक परीक्षित तथ्यके विरुद्ध नहीं होता तबतक ग्रहणीय होता है। स्टालके अनुमानका सत्यासत्य एक परीक्षामूलक तथ्यपर निर्भर था। वह यही था कि यदि स्टालका अनुमान सत्य है, अर्थात् जलते समय यदि कोई पदार्थ निकल जाता है, तो वस्तुके जल चुकनेपर उसका वजन अवश्य घट जायगा। लकड़ीके एक टुकड़ेके जलनेसे जो भस्म वनेगा उसकी तौल लकड़ीकी तौलसे अवश्य कम होगी। किन्तु लकड़ीके जलते समय भस्मके सिवा और भी चीजें वनती हैं जो भाफरूपमें उड़ जाती हैं। इन सबके वजनका निर्णय करना कठिन है। इस कारण लकड़ीके भस्मके द्वारा स्टालके अनुमानका सत्यासत्य प्रतिपन्न नहीं हो सकता। धातुको जलानेसे केवल धातु भस्म वनता है। अब देखना है कि प्राप्त धातुभस्मका वजन मूलधातुके वजनसे कम होता है या अधिक। यदि कम होता है तो स्टालका अनुमान सत्य है और यदि अधिक होता है तो वह मिथ्या है। स्टालके पूर्व ही परीक्षा-द्वारा प्रमाणित हो चुका था कि धातुका भस्म वनानेपर धातुकी अपेक्षा भस्मका वजन वढ जाता है, घटता नहीं। रावर्ट ब्येलने राँगका भस्म वनाकर

प्रमाणित किया था कि गृहीत राँगकी अपेक्षा राँगका भस्म बहुत अधिक होता है। जान मेयो नामक इङ्गलेण्डके और एक प्रसिद्ध रासायनिकने एण्टीमनी नामक धातुका भस्मकर दिखाया था कि धातुभस्म गृहीत धातुके वजनकी अपेक्षा अधिक है। इनकी परीक्षाका फल स्टालको मालूम था, किन्तु वे इस ओर कुछ ध्यान न देते थे।

कुछ समयके बाद जब रासायनिकोंकी दृष्टि इस ओर घूमी तब फ्लजिष्टनवादके पक्षपातियोंमें गड़बड़ी फैल गई। किसी किसीने इसकी एक व्यर्थ मीमांसा करनेके लिए कहा—फ्लजिष्टनमें वजन नहीं, वह मध्याकर्षणके द्वारा पृथिवीकी ओर आकृष्ट न हो कर विपरीत दिशामें उठ जाता है। इसलिए इसके मिल जानेसे वस्तुका वजन घट जाता और अलग हो जाने पर बढ़ जाता है। यह एक बड़ी अद्भुत मीमांसा थी। यदि फ्लजिष्टन मध्याकर्षणके द्वारा आकृष्ट नहीं होता तो वह किस जातिका पदार्थ है और कैसे दूसरी वस्तुओंसे मिल जायगा। अनेक दिनोंकी सञ्चित धारणा सहज ही नहीं जाती। इस विषयमें इस प्रकारकी एक काल्पनिक मीमांसासे सन्तुष्ट होनेसे उस समयके रासायनिक फ्लजिष्टनवादमें भूल देखकर भी देख न पाये।

इस फ्लजिष्टनवादमें भ्रम दिखाकर रसायनशास्त्रको नई नींव पर स्थापितकर लेवोसियेने गौरवमण्डित महाकीर्ति कमाई। उनके समसामयिक इङ्गलेण्डके विख्यात रासायनिक जासेफ प्रिष्टले और हेनरी केवेण्डिस, स्काटलैण्डके जासेफ ब्लाक, स्वीडनके शिले आदि यावतीय रासायनिक ही इस फ्लजिष्टन वादके परिपोषक थे। उस समयके समग्र रसायनशास्त्रकी

परिभाषा फ्लजिष्टनवादकी परिभाषाको लेकर बनाई गई थी। इस सम्बन्धके नाना विघ्न बाधाओं और आपत्तियोंका खण्डन कर लेवोसियेने निर्भय हो फ्लजिष्टनवादको भ्रममूलक बताया। नई बातका पहले पहल प्रचार करनेमें उसपर पहले लोग विश्वास नहीं करते। अन्तमें सत्यकी जय अवश्य ही होती है। इस सम्बन्धमें पहले अनेक लोग ही लेवोसियेके विरुद्ध हो गये। क्रमसे सत्यको जय हुई। किस प्रकार लेवोसिये फ्लजिष्टनवाद सम्बन्धी भ्रम अच्छी तरह दिखा सके, इसकी अब हम यहाँ आलोचना करेंगे।

प्रिष्टलेके द्वारा अम्लजन (oxygen) का आविष्कार।

धातुके वजनकी अपेक्षा धातुके भस्मका वजन अधिक होता है, इस सच्चे आविष्कारके बाद फ्लजिष्टनवादका पतन अवश्यम्भावी हो गया। किन्तु जबतक धातुभस्मका वजन बढ़नेका कारण ठीक मालूम न हुआ था, तबतक फ्लजिष्टनवादके विरुद्ध लेवोसिये किसी नये मतका प्रचार न कर सके। इस कारण लेवोसिये इस बातका निश्चय करनेकी चेष्टा करते रहे कि किस पदार्थके मिल जानेसे धातु भस्ममें परिणत हो जाता है।

सौभाग्यसे उनके समसामयिक इङ्गलेण्डके दो विख्यात रासायनिकोंने दो अत्यन्त प्रयोजनीय वैज्ञानिक तथ्योंके आविष्कार किये। जासेफ प्रिष्टले (Joseph Priestley) के द्वारा अम्लजन और हेनरी कैवेण्डिस (Henry Cavendish) के

द्वारा जलका रासायनिक स्वरूप आविष्कृत हुआ। इन दो अविष्कारोंके होनेसे लेवोसिये फ्लजिष्टनवादको हमेशाके लिए रसायनशास्त्रसे विदूरित कर सके।

अम्लजनके आविष्कर्ता जासेफने सन् १७३३ ईसवीमें प्रिष्टले इङ्गलेण्डके अन्तर्गत लिडस् नामक शहरके निकटवर्ती फील्ड-हेडस् नामक स्थानमें जन्म लिया था। वे दरिद्रकी सन्तान थे और उनकी छः वर्षकी उम्रमें ही उनकी माताकी मृत्युहो गईथी। उनकी वहनने उनको पाला-पोसा था। वाल्यकालमें वे रसायन-शास्त्रकी शिक्षा न पा सके थे। उत्तर कालमें वे धर्मयाजकके पद पर प्रतिष्ठित थे। ये इङ्गलेण्डके नाना स्थानोंमें धर्मयाजक रह कर सन् १७६१ में लिडस्में मिलहिल चैपेलके धर्मयाजक हुए। सौभाग्यसे उनके गिरजाके वगलमें ही शराव वनानेका कारखाना था। शराव टपकाते समय एक प्रकारका वायु वाहर निकलता है, जिसे हम अङ्गाराम्ल (Carbonic acid gas) कहते हैं। प्रिष्टलेने इस वायुकी परीक्षा करना चाहा। इस वायुकी परीक्षा करना प्रारम्भ करके उन्होंने इतनी वायुओंके स्वरूपका आविष्कार कर डाला कि वे रसायनशास्त्रमें 'वायवीय रसायनके जन्मदाता' कहला कर प्रसिद्धि पा गये।

इस समयकी तरह उस समय दुमञ्जिलो या तिमञ्जिलो, नाना यन्त्रोंसे भरी-पूरी रसशालायें* न थी। प्रिष्टलेके रासाय-

* Chemical laboratory के अर्थमें रसशालाका प्रयोग किया गया है। रसरत्नसमुच्चयमें रसशालाका विस्तृत विवरण है। इसलिए रासायनिक परीक्षागार आदि शब्द गढ़नेकी जरूरत नहीं।

क यन्त्र थे—लम्बी लम्बी शीशियाँ, बोतल, काग, जलपात्र, डेकी थेलियाँ आदि सामान्य वस्तुयें। किन्तु इन्हीं सामान्य शी बोतलोंकी सहायतासे प्रिष्टले, अम्लजनका आविष्कार वायुका आशिक स्वरूप निर्णयकर, जलके स्वरूप निर्णयके ोंका आविष्कारकर, हाइड्रोक्लोरिकऐसिड गैसका आविष्कार, रासायनिक जगत्में यशस्वी हो गये हैं। नाना प्रकारकी युसम्बन्धी उनकी परीक्षाका फल एक वृहत् ग्रन्थमे प्रकाशित किया गया है, जिसके तीन खण्ड हैं। उनके समस्त आविष्कारोंका वर्णन करनेके लिए यहाँ स्थान नही, हम यहाँ वल उनके अम्लजनके आविष्कारके सम्बन्ध की ही लोचना करेंगे।

प्रिष्टलेके पास एक अच्छा आतशी शीशा था। वे इस तशी शीशाके द्वारा सूर्यताप एकत्रकर उसी तापसे नाना व्योकी परीक्षा करते थे। इसी उपायसे लालपारदभस्मको रम करते समय उन्होंने देखा कि उससे एक तरहकी गैस कल रही है। उसकी परीक्षा करनेसे देखा कि वह साधारण वायुसे भिन्न है। साधारण वायुकी अपेक्षा इस गैससे मबत्ती अधिक अच्छी तरह जलती है। इस गैसमे तथा समपरिमाण साधारण गैसमें उन्होंने कुछ चूहे छोडकर देखा के साधारण वायुकी अपेक्षा इस गैसमे चूहे अधिक क्षण जीते रहते हैं। वे स्वय भी इस वायुको सूँघनेकी अपनी इच्छा रोक न सके। वे लिख गये हैं—

"यह गैस सूँघने वक्त फेफडोपर उसकी क्रिया साधारण ायुसे भिन्न नही मालूम हुई, किन्तु सूघनेके कुछ देर बादतक छातीमें अधिक स्वच्छन्दताका अनुभव हुआ था। कालान्तरमें

य.यद व. वायु विलासकी सामग्री हो जाये। आज तक मेरे साथ दो चूहोंने भी इस वायुके सेवनका सुख अनुभव किया है।

प्रिष्टलेकी भविष्यवाणी बहुत कुछ सफल हुई है। अम्लजन यद्यपि अब तक भी विलासकी सामग्रियोंमें स्थान नहीं पा सका है तथापि मृतप्राय व्यक्ति अम्लजन सुँघाकर कुछ समय तक बचाया जा सकता है।

इस प्रकार प्रिष्टले लाल पारेके भस्मको गरम कर साधारण वायुसे भिन्न गुणवाले नये वायुका अविष्कारकर दूसरी चीजोंमें उसे ढूढने लगे। सिन्दूर (Red lead) को गरमकर देखा कि उसमें भी पूर्वोक्त वायु पाया जाता है। इस प्रकार वे इस नवीन वायुका अस्तित्व निसन्देह प्रमाणितकर सके। इस नये वायुका नाम 'फ्लजिष्टनहीन वायु' रक्खा। साधारण वायुकी अपेक्षा इस वायुमें मोमबत्ती अधिक अच्छी तरह जलती है, कारण इसमें साधारण वायुकी अपेक्षा फ्लजिष्टन कम होता है, इस प्रकारके भ्रान्त सिद्धान्तपर वे भी आ पहुँचे।

इस नये वायुके अविष्कारकी खबर लेवोसियेके कानोंतक पहुची। उनकी सूक्ष्म दृष्टिने देखा कि यह नया वायु फ्लजिष्टनवादका मोहमय आवरणको दूर करेगा। वे पहले प्रिष्टलेकी परीक्षाका विचार करने लगे, किन्तु उनकी चिन्ता लहरी दूसरी ओर झुक गई। उन्होंने सोचा कि जब मोमबत्ती साधारण वायुकी अपेक्षा इस नये वायुमें अधिक उज्ज्वलतासे जलती है तब साधारण वायुकी अपेक्षा इस नये वायुमें कोई अन्य वायु मिश्रित है और बत्तीके जलते वक्त यह नया वायु बत्तीके उपादानसे सयुक्त हो जाता है। साधारण वायुसे

इस नये वायुको निकालनेके लिए वे सचेष्ट हुए और निर्दिष्ट तोलका पारा एक वकयन्त्र (retort) में रक्खा । पारेके एक पात्रमें आंशिक भावसे निमज्जित वायुपूर्ण घटाकृत काचपात्र (bell jar) में इस वकयन्त्रके मुँहको प्रविष्ट कर दिया। पहले कागजके एक टुकडेसे काचपात्रके वायुका परिमाण माप कर वकयन्त्रमें पारेको रख बारह दिन आँच दी। क्रमसे देखा गया कि वायुका परिमाण प्राय ६ भागमेंसे एक भाग कम हो गया है और वकयन्त्र स्थित पारेके ऊपर लाल रङ्गकी पारद-भस्म तैयार हुई है । काचपात्रमें बचे हुए वायुकी परीक्षा करके देखा कि उसमें अब बत्ती नहीं जलती। अनन्तर तैयार हुए लाल पारदभस्मको गरम करनेसे उनको उसमेंसे नया वायु बहुत कुछ प्राप्त हुआ। इस परीक्षाके द्वारा वे साधारण वायुमें इस नये वायुका अस्तित्व निस्सन्देह प्रमाणित कर सके। उन्होंने यह भी दिखलाया कि साधारण वायुमें जो यह नया वायु रहता है वह पारेमें संयुक्त हो जाता है और इससे पारद-भस्म तैयार होता है । इसी प्रकार अन्य धातुओंमें भी इस वायुका संयोग होनेसे उनका भस्म तैयार होता है। वे जो खोज रहे थे वह इतने दिनोंके बाद मिला। उन्होंने इस नये वायुका नाम अम्लजन रक्खा।

अब उन्होंने इस बातका प्रचार किया कि फ्लजिष्टनवाद बिलकुल भ्रम भरा है । धातुके भस्मको तौलनेपर उसका वजन घटता नहीं बल्कि बढ जाता है। वजनकी इस वृद्धिका कारण और कुछ नहीं—धातु साधारण वायुके अन्यतम उपादान अम्लजनसे संयुक्त हो जाता है। जब धातुभस्म अङ्गार आदिको आँच देनेपर धातुमें परिणत हो जाता है, तब अङ्गार

धातुके अम्लजनके साथ सयुक्त हो अङ्गाराम्ल (carbonic acid gas) में बदल जाता है और असयुक्त धातु रह जाता है। फ्लजिष्टन नामका कोई पदार्थ नहीं, वह कष्टकल्पना मात्र है। पहले पहल उनके नवीन मतकी पुष्टि किसीने न की। क्रमसे उनके जीतेजी ही, डि मरविड, वार्थोले, फुरक्रय आदि फरासीसी और ब्लाक आदि स्काच रासायनिकोंने उनके मतकी पुष्टि की। केवल प्रिस्टले और केवेण्डिस आजीवन फ्लजिष्टनवादी बने रहे।

केवेण्डिसके द्वारा जलका रासायनिक विश्लेषण

किन्तु अवतक लेवोसियेका अम्लजनवाद एक विषयकी मीमासा न कर सका था। इसके पूर्व ही यह मालूम था कि यशद (zinc) आदि धातु जब जलीय हाइड्रोक्लोरिक या सलफ्यूरिक अम्लमें द्रवीभूत होते है तब उद्‌जन (Hydrogen) नामक एक बहुत हलका गैस बाहर निकलता है एवं धातु भस्म होकर अम्लसे सयुक्त हो लवण (salt) में परिणत हो जाता है। फ्लजिष्टनवादी कहते थे कि यह अत्यत हलका उद्‌जन ही फ्लजिष्टन है, और अम्लके सयोगसे धातुसे फ्लजिष्टन निकल जाता है और अवशिष्ट धातुभस्म रह जाता है। लेवोसियेने इसके उत्तरमें कहा कि यह उद्‌जन वायु हलका होनेपर भी वजनदार है। फिर उसके निकल जानेपर धातुभस्मकी तौल धातुके तौलकी अपेक्षा क्यों बढ जाती है? उन्होंने फ्लजिष्टनवादियोंका भ्रम दिखला दिया सही, किन्तु अपने मतके अनुसार कोई अच्छी मीमासा न कर सके।

इसी समय इङ्गलैण्डके तात्कालिक अन्यतम प्रधान रासायनिक केवेरिडसने जलका रासायनिक स्वरूप निर्णय किया। प्राचीन ग्रीकोंका मत था कि क्षिति, अप, तेज और वायु इन चार पदार्थोंके सयोगसे पृथिवीके यावतीय पदार्थोंकी उत्पत्ति हुई है। प्राचीन भारतके आचार्य इन चार भूतोंके सिवा व्योम नामक सूक्ष्मतर मौलिक पदार्थकी कल्पना कर गये हैं। वैज्ञानिकोंके कठोर हाथमें पड जानेसे अज्ञातकुलशील 'व्योम' के सिवा अन्य चार भूतोंका भूतत्व लुप्त हो गया है। प्रिस्टले, केवेण्डिस, सिलें, लेवोसियेकी गवेषणाओंसे साधारण वायु अम्लजन और नाइट्रोजन नामक दो पदार्थोंका मिश्रण प्रमाणित हुआ है। केवेरिडसने जलका यौगिकत्व प्रमाणित कर दिया।

हेनरी केवेरिडसका जन्म एक बडे घरमें हुआ था—ड्यूक आफ डेवेनसायरके पौत्र और लार्ड चार्ल्सके जेठे लडके थे। उनका जन्म सन् १७३१ ई० में हुआ था और दो वर्षकी उम्रमें ही मातृहीन हो गये थे। उन्होंने पहले हेक्नी स्कूलमें और अनन्तर केम्ब्रिज विश्वविद्यालयमें शिक्षा प्राप्त की थी। वे एक भिन्न प्रकारके मनुष्य थे—किसीसे बहुत मिलते जुलते न थे, बहुत कम बातचीत करते थे और यद्यपि वे बहुत कुछ लिख गये हैं, किन्तु अपना नाम प्रकट करनेमें वे बहुत डरते थे, और इसलिए उनके लेख बहुतही कम प्रकाशित हुए थे। वे बुढापेमें बहुत धनवान् हो गये थे। किन्तु उनका खर्च बहुत कम था। वे अपने कपडे लत्तेकी ओर भी अधिक ध्यान न देते थे। और उनके घरका साज-सामान उनके प्रकृतिके अनुसार ही था। जिस घरमें बैठक खाना था, उसी घरको उन्होंने अपना प्रधान यन्त्रागार बना लिया था। दूसरे मंजिलके कमरोंको उन्होंने

मानमन्दिर बना लिया था। उनकी मृत्युके समय केवल एक नौकरमात्र उनके पास था। किन्तु जब उनको मालूम हुआ कि उनका आखिरी वक्त आ पहुँचा है, तो उन्होंने नौकरको विदा किया और हुक्म दिया कि आध घण्टेके पहले न आना। नौकरने लौट आकर देखा कि उनके मालिक संसारसे कूच कर गये हैं।

यह चिरनिर्जनताप्रिय, ससारविरागी, कुछ विकृत मस्तिष्क अगरेज अपना समग्र जीवन भारतके साधनानिरत योगियोंकी तरह विज्ञानकी सेवामें बिता गया। वे अङ्कशास्त्र, ज्योतिष और रसायनके असाधारण पण्डित थे। उनको केवल इन विषयोंका असामान्य ज्ञान ही न था, वे इन विद्याओंके सम्बन्धकी बहुतसी मौलिक गवेषणायें भी कर गये हैं। वे पृथिवीका आपेक्षिक गुरुत्व निर्धारित कर गये हैं, वायुका परिमाणात्मक रासायनिक विश्लेषण कर गये हैं, ताप सम्बन्धी परिमाणात्मक नियमका आविष्कार कर गये हैं, और जलका यौगिकत्व प्रमाणित कर गये हैं। इस प्रकार क्षिति, अप, तेज, वायु ये सबतुर्भूत उनकी सूक्ष्म दृष्टि और परीक्षाके बाहर न थे। वे अपनी प्रत्येक परीक्षामें लेवोसियेकी तरह तराजूका उपयोग करते थे। इसीलिए कोई कोई अङ्गरेज उनको रसायनशास्त्रका जन्मदाता कहनेका अभिमान करते हैं।

केवेण्डिसने जिस परीक्षाके द्वारा जलका यौगिकत्व प्रमाणित किया था, प्रिस्टलेने भी उनके पहले वही परीक्षा की थी। किन्तु वे इस परीक्षाके गूढ मर्मका अनुसरण न कर सके थे। प्रिस्टलेने काचके एक बरतनमें उद्जन और साधारण वायुको मिश्रित किया और उसे वैद्युतिक स्फुलिङ्ग (eletric spark)

के द्वारा जलाया। इन दोनो वस्तुओंके मिलनेपर उन्होंने काच के परतनके भीतरी भागमें कुछ जलविन्दु देखे। उन्होंने सोचा कि उद्‌जन और वायुके रासायनिक संयोगसे यह जल नहीं बना है, बल्कि शायद वायुमें रहे जलीयवाष्पसे बना है। साराशमें, उन्होंने इस जलकी ओर पहले ध्यान नहीं दिया। यदि ध्यान देते तो वे ही जलके रासायनिक उपादानके आविष्कारका नाम हासिल करते। केवेण्डिसने प्रिस्टलेकी परीक्षाकी पुनरावृत्तिकर मन ही मन ठीक किया कि यह जल कोई अवास्तव पदार्थ नहीं है, वह उद्‌जन और वायुके अम्लजनके संयोगसे पैदा होता है। क्रमश उन्होंने परीक्षा द्वारा दिखलाया कि समग्र उद्‌जन गैस और साधारण वायुका पञ्चमाश एकत्र मिलकर जल में परिणत हो जाता है। एक वक्त वे इस उपायसे १३५ ग्रेन विशुद्ध जल तैयारकर सके थे। ऐसे जलमें न कोई स्वाद होता था और न गन्ध ही। वह गरम करनेसे सब भाफ बनकर उड जाता था।

केवेण्डिस इतनेसे ही सन्तुष्ट न हुए। वे वायुकी जगह विशुद्ध अम्लजन ग्रहणकर परीक्षा करने लगे। उन्होने परीक्षा द्वारा दिखलाया कि एक भाग अम्लजन और दो भाग उद्‌जन मिलाकर गरम करनेसे सब गैस जलमें बदल जाता है, असयुक्त अम्लजन या उद्‌जन शेष नहीं रहता। इसलिए दो भाग उद्‌जन और एक भाग अम्लजन मिलनेसे विशुद्ध जल बन जाता है।

सन् १७८३ में, सर चार्ल्स ब्लागडेन नामके केवेण्डिसके एक बन्धु एव सहकारीने इन सब परीक्षाओंका फल लेवोसिये को दिखाया। लेवोसियेने तुरन्त ही केवेण्डिसकी परीक्षा पुन की। इससे उनको जल प्राप्त हुआ। उन्होंने जलीय वाष्पको

पोर्सिलेनके नलमें गरम लोहे पर चलाकर उससे उद्जन वायु प्राप्त किया। इस परीक्षामें जलीय वाष्प अलग होकर अम्लजन-में परिणत होता है, और अम्लजन गैस लोहेसे संयुक्त होकर आक्साइड आफ आयर्नमें परिणत होता है और उद्जन बाहर हो जाता है। अब इस दो प्रकारकी परीक्षा द्वारा जलके रासायनिक स्वरूपके सम्बन्धमें और सन्देह न रहा।

लेवोसिये केवल इन सब परीक्षाओंसे सन्तुष्ट न हुए। केवेण्डिसको फ्लजिष्टनवादकी सत्यताके सम्बन्धमें सन्देह न था।। इससे इन सब परीक्षाओं के भीतर छुपे गूढ़ सत्यका सधान उन्होंने न पाया। लेवोसियेकी असाधारण अन्तर्दृष्टिने इसका सधान पाया था। उन्होने अब देखा कि यह आविष्कार फ्लजिष्टन वादियों की बची-खुची आशा भी दूर कर देगा। धातु और जलीय अम्लके सयोगसे उद्जन कैसे पैदा हो जाता है, अवतकमें उन्होंने इसकी सुन्दर मीमांसा कर दी। उन्होंने कहा कि इसमें इस प्रकार रासायनिक प्रक्रिया होती है—पहले जल अलग होकर अम्लजन और उद्जनमें परिणत होता है और पीछे अम्लजनके साथ धातुसे सयुक्त होनेपर धातुभस्म बनता है। वही धतुभस्म अम्लके साथ सयुक्त हो लवण (salt) में परिणत होता है और उद्जन वायु अविकृत अवस्थामें बाहर निकल आता है। इसलिए धातु और जलीय अम्लके सयोगसे काल्पनिक फ्लजिष्टनकी उत्पत्तिकी कोई सचाई भी नहीं। जलके अलग होनेपर एक ओर उद्जन वायु बाहर निकलता है और दूसरी धातुभस्म तैयार होता है। इतने दिनोंमें लेवोसियेका जीवनव्रत उद्यापित हुआ।

लेवोसियेके द्वारा फ्लजिष्टनवादका उच्छेद हुआ। उसका विवरण पढनेसे जाना जा सकता है कि किस प्रकार धीरे धीरे एकके बाद दूसरे वैज्ञानिक सत्यका आविष्कार हुआ। इसी फ्लजिष्टनवाद का सत्यासत्य निर्द्धारित करनेके लिए कितने ही महापुरुष समग्र जीवन उत्सर्ग कर गये है। रावर्ट वेल, हुक, मेयो, ब्लेक, प्रिस्टले सिले, वार्गमान, केवेरिडस, कारोयन, रादार फोर्ड, जेम्स वाट, और सर्वोपरि लेवोसियेका गौरव-मरिडतका नाम इनके साथ सयुक्त है । अँगरेजीमें एक वाक्य है—"A chemist is the most patient animal, even the ass not expected"—अर्थात् चिरसहिष्णु गदहेकी अपेक्षा भी रासायनिकको सहिष्णु वनना पडता है। किसीने अशेष सहिष्णुताके साथ सारी जिन्दगी नाना प्रकारकी परीक्षाओंमें विता दी है, किसी किसीने फिर इन्हीं परीक्षाओंका अवलम्ब ले किसी नये अनुमानका प्रचार किया है । सिद्धान्तमें, सवही साधनको जीवनका मुख्य उद्देश्य वना गये हैं, ज्ञानकी उन्नतिको ही एकमात्र ध्रुव सत्य समझकर ज्ञानकी सेवामें ,जीवन विता गये हैं।

बहुतसे लोग खयाल करते हैं कि कल्पनाशक्तिका प्रयोजन केवल कविको ही होता है, किन्तु यह खयाल विलकुल ही ठीक नहीं। क्या कवि, क्या दार्शनिक, क्या वैज्ञानिक सवको ही कल्पनाशक्ति, भाव प्रवणताकी वेसी ।ही जरूरत होती है। इसी कल्पनाशक्तिके वलसे वैज्ञानिक स्थूलमें सूक्ष्म देखते हैं, बहुदूरस्थित नक्षत्रोंकी गति नयनोंके सम्मुख देखते हैं, जडजगत्के प्रत्येक अणुपरमाणु, सृष्टि-स्थिति प्रलय, आवर्त्तन-विवर्त्तन, आकृति विकृति न देखकर भी देख पाते हैं।

चौथा परिच्छेद

माइकेल फ़राडे

मैं यदि कहूँ कि आपके घर जो हिन्दुस्तानी बालक अख़बार पहुँचा आता था, वह या उनके दलमेंसे कोई एक समयान्तरमें डाक्टर सर जगदीशचन्द्र वसुकी तरह वैज्ञानिक हो गया अथवा दफ़्तरीके दूकानोंमें जो लडके खातावही बनाते हैं उनमेंसे कोई मन्त्रबलसे डाक्टर प्रफुल्लचन्द्र रायकी तरह रासायनिक हो गया तो पाठक क्या आप मेरी बातपर विश्वास करेंगे ? आप विश्वास करें चाहें न करें मैं आपको ऐसे ही एक महापुरुषका वृतान्त सुनाऊँगा। उनके जीवनमें असम्भव भी सचमुच सभव हो गया था। दरिद्र लोहारकी सन्तान माइकेल फराडे लडकपनमें अखबार पहुँचानेका ही काम करते थे। भविष्यजीवनमें वे ही एक अद्वितीय रासायनिक और पदार्थतत्वविद् हो अशेष ख्याति पैदाकर गये। एक चिन्ताशील लेखकने प्रतिभा (genius) का स्वरूप बताते हुए लिखा है—Genius consists in the capacity of taking unlimited pains" अर्थात् अशेष परिश्रम करनेकी क्षमताही प्रतिभाका लक्षण है। किन्तु मालूम होता है, परिश्रम करनेकी क्षमतासे ही प्रतिभाका परिचय प्राप्त नहीं होता। इसके सिवा दैव, अतिमानुषिक मानसिक और नैतिक शक्ति प्रतिभामें प्रच्छन्न रूपसे विलसती है। हिन्दूशास्त्रकारोंने पूर्व जन्मार्जित सुकृतिका

अस्तित्व स्वीकार किया है । इस प्रकार कोई सुकृति न होनेसे लोहारकी सन्तान माइकेल फराडे किस पुण्यबलसे आज विश्वके इतने नरनारियोंके पूज्य हो गये हैं ।

माइकेल फराडेका जन्म सन् १७८१ के २२ सितम्बरको इङ्गलेण्डके अन्तर्गत न्यूटन नामक स्थानमें हुआ था । वे पिता माताकी तीसरी सन्तान थे और उनके जन्मके बाद उनके पिता देहातसे इङ्गलेण्ड चले आये । उनके पिता रुपये पैसेसे इतने तंगदस्त रहते थे कि सन् १८०१ में दुष्कालके समय उनको दातव्य साहाय्य ग्रहण करना पडा था । इस समय माइकेलको कभी केवल एक रोटी खाकर सात दिन निकालने पडे थे । माइकेलकी लिखाई पढ़ाई फिर कैसे हो । तथापि उनके पिता माताने उनको स्कूल भेजा था । बालक माइकेलने स्कूलमें लिखना पढना और साधारण हिसाब निकालना सीखा था ।

सन् १८०४ में तेरह वर्षकी अवस्थामें माइकेल फराडे जार्ज रिबो नामक एक कुतुबफरोश और दफ्तरी की दूकानमें अखबार पहुँचानेके कामपर नौकर हुए । घर घर अखबार पहुँचाना उनका मुख्य काम था । सम्भव है, एक घरसे दूसरे घरका फासला एक मीलसे भी ऊपर रहा हो । इस तरह कुछ दिन बीतने पर, १८०५ ई० के अक्तूबर महीनेसे जिल्द-बन्दी सीखने लगे । जिल्दबन्दी तो बहुतसे लोग करते हैं, पर सब पुस्तकें पढ़ने की प्रवृत्ति सबको नहीं होती । माइकेलमें जो प्रतिभा फल्गु नदीकी तरह अन्त सलिला हो रही थी, उसीने उनको पुस्तकें पढ़नेमें प्रवृत्त किया । माइकेल जिल्दबन्दीके

अवस्थामें वे डाक्टर वेडोज नामक एक चिकित्सकके सहकारी नियुक्त हुए। इस समय डेवी नाइट्रस आक्साइड नामक गैस की परीक्षामें लगे थे।

पहले वैज्ञानिकोंकी धारणा थी कि यह गैस बहुत विषाक्त होती है। अपने शरीरमें इस गैसकी क्रियाकी परीक्षा करनेकी गरजसे वे साहसकर इस गैस को सूँघने लगे। कई मिनट के बाद वे बेहोश हो गये, किन्तु बेहोशीकी हालतमें उनको मालूम होने लगा कि मानो वे अमरावतीमें सुखपूर्वक विचर रहे हैं और साथही हस रहे थे। थोडी देर बाद ही वे होशमें आकर उठ बैठे। उस समय शरीरमें कुछ भी ग्लानि न थी। उसी समयसे यह गैस हास्योदीपक गैसके नामसे प्रसिद्ध हुई है। इस अद्भुत गैसका स्वरूप आविष्कृत करनेके बाद डेवीका नाम वैज्ञानिक समाजको परिचित हुआ। सन् १८०१ में रायल इष्टीट्यूशनकी स्थापना हुई और काउएट रमफोर्ड (Count Rumford)ने उनको यहाँ सहकारी रासायनिक परीक्षक नियत किया। वे विज्ञान सम्बन्धी नाना गवेषणाओंमें लग गये। सन् १८०७ में उन्होंने विजलीकी मददसे काष्टिक पोटाश (caustic potash) और कास्टिक सोडा (caustic Soda) नामके दो तीक्ष्ण क्षारों को विश्लिष्ट कर पोटासियम (potassium) और सोडियम (Sodium) नामकी दो धातुओंका आविष्कार किया। इस उपायसे मेगनेसियम (magnesium) वेरियम (barium) केलसियम (calcium) और ष्ट्रनसियम (Strontium) नामक और चार धातुओंका आविष्कार किया। किन्तु एक हिसाबसे उनका सर्वप्रधान वैज्ञानिक आविष्कार-सेफटी लेम्प (safety-lamp) था। कोयलेकी खदानमें नाना प्रकारकी जल उठनेवाली

गैसें होनेसे उनके भीतर किसी प्रकारका प्रकाश लेजाना पहले विपद्जनक था । डेवी अपने नये लेम्पका आविष्कारकर खदानके भीतर काम करनेवाले लाखों मनुष्योंकी प्राण-रक्षाकी व्यवस्था कर गये हैं ।

डेवीमें वक्तृता देनेकी क्षमता अद्भुत थी । उनकी वक्तृता सुननेके लिए झुण्डके झुण्ड पुरुष और स्त्री आते थे । यूरोप और अमेरिकाके विख्यात अध्यापकोंकी वक्तृताओंमें विशेषता यह होती है कि वे अपने अपने आविष्कारके विषयपर ही वक्तृता देते हैं । हमारे देशमें मौलिक गवेषणाओंका अभाव होनेसे विश्वविद्यालयोंमें पुरानी गवेषणाओंकी ही आलोचना होती है । इस विभिन्नताका फल विभिन्न ही होता है । एक ओर केवल चर्वित चर्वण होता है, पढ़ी विद्या पढ़ाई जाती है, दूसरी ओर नये नये तथ्यों के आविष्कारकी ज्वलन्त काहिनीका अनिवार्य आकर्षण श्रोताओंके मनमें अनुराग जगा देता है । एक ओर पुस्तकस्थ विद्याको कठ करनेके सिवा और कुछ फल नहीं होता । दूसरी ओर वक्ता के आदर्शका अनुकरणकरनेकी प्रवल आकांक्षा श्रोताओंको आकुल कर देती है । फराडे गेलरीके एक कोनेमें बैठे एकाग्रचित्तसे डेवीकी अपने आविष्कार सम्बन्धी भावभङ्गिमामयी वक्तृता सुनते थे । धीरे धीरे डेवीका वैज्ञानिक आदर्श उनके मनमें भी उदित होने लगा । दफ़्तरीका काम अब उनको रुचिकर न मालूम होने लगा । अब वे इस बातकी चिन्तामें व्यग्र रहने लगे कि कैसे दफ़्तरीका काम छोड़कर अति दीनभावसे भी विज्ञान की सेवाकर सकें ।

वैज्ञानिक वक्तृतायें सुननेकी उनको ऐसी प्रबल इ
रहती थी कि वे प्रत्येक वक्तृताके कारण एक शिलिङ्ग खर्च क
भी ४३ न डरसेट ष्ट्रीटमें रहनेवाले मिस्टर टटमेरके
रातको आठ बजे वक्तृता सुनने जाते थे। उनके पास पैस
रहता था, उनके भाई रावर्ट ये सब वक्तृतायें सुननेके ि
उनको खर्च देते थे। वे ये सब वक्तृतायें सुनकर ही निश्चिन्त
हो जाते थे, उनका सारमर्म कापीपर लिख लेते थे और
र्शित यन्त्रका चित्र भी खींच लेते थे।

१८१२ ईसवीके सात अक्टूबरको इन्होंने रिवोके प
दफ़्तरीकी शिक्षा समाप्त की। इसके बाद उन्होंने दफ़्तरी
पेशा अख़्तियार किया। कुछ दिन पेशा चलनेपर उन
देखा कि वे दफ़्तरीका काम सीखते वक्त विज्ञानचर
लिए जितना समय पा जाते थे उतना अब नहीं मिलत
इसलिए अबसे उन्होंने इस बातका दृढ़ सकल्प किया कि
जैसे हो दफ़्तरीका काम छोड़ देना ही होगा। इसके पहले उन्
इङ्गलैण्डकी रायल सोसायटी नामक विख्यात वैज्ञानि
सभाके सभापति जासेफ़ बैंकस्को विज्ञानचर्चाके विषय
अपना एकान्त आग्रह प्रकटकर वहाँ एक नौकरीके लिए
भेजा था। सभापति उनके इस दु साहसका उत्तर क्या दे
अब उन्होंने सर हेमफ्री डेवीको एक पत्र लिखनेका विच
किया। वे लिख गये हैं—"इसवक्त अपना पेशा छोड़ने अ
विज्ञानकी सेवा करनेकी मेरी इच्छा इतनी बढ़ गई कि मैं
साहसकर हेमफ्री डेवीको एक पत्र लिखा। मुझे यह धार
हो गई थी कि मेरा निजी पेशा नीच और स्वार्थपरतापूर्ण है औ
वैज्ञानिक लोग सदाशय और महत् व्यक्ति होते हैं इस पत्रमें मैं

स्यूशनके परिचालकगणोंकी सभाके कार्य विवरणमें निम्न लिखित प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। प्रस्ताव इस प्रकार लिखाहै—"सर हेमफ्री डेवीने इंष्टीस्यूशनके परिचारकवर्गोंको सूचना दी है कि उन्होंने एक व्यक्तिके सम्बन्धमें सूचना पाई है जो विलियम पेन का परित्यक्त, पदग्रहणकरनेकी इच्छा रखता है। उसका नाम माइकेल फेराडे है। उसकी अवस्था बाईस वर्ष की है। वह सुशील कर्मठ, प्रफुल्लचित और बुद्धिमान मालूम होता है। मिस्टर पेनजो वेतन पारहे थे उसी वेतनपर काम करनेके लिए वह राजी है।

"अतएव स्थिर हुआ कि माईकेल फेराडे मिष्टर पेनकी जगह उसी वेतन पर नियुक्त किये गये।"

"यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवतितादृशी"—फेराडे अब तक जिसकी इच्छा कर रहे थे, वही प्राप्त हुआ। पचीस शिलिंग साप्ताहिक वेतनपर रायलइंष्टीस्यूशनके सहकारीका पद उनको प्राप्त हुआ और रहनेके लिए ऊपरी मंजिलपर दो कोठरियाँ भी मिलीं।

यूरोप-भ्रमण

फेराडे आग्रहपूर्वक अपना काम-काज करने लगे। डेवं इसी समय नाइट्रोजन क्लोराइड नामक अत्यन्त विष्फोरक पदार्थ की परीक्षा कर रहे थे। जरासी भी असावधानी हो जानेसे यदि यन्त्र फटजाय तो प्राण जानेका डर है। इस सम्बन्धमें डेवीने फेराडेको अपना सहकारी बनाया। इससे स्पष्ट समझ पडता है कि उनको फेराडेकी दक्षताका विश्वासहो गया था

वे दोनो काचका वर्म और शिरस्त्राण पहन कर इस विस्फोरक पदार्थकी परीक्षा कर रहे थे और किसी प्रकारकी विपत्ति न आनेसे स्पष्ट समझ पडता है कि फेराडेने बडी सावधानी और निपुणतासे अपनाकर्तव्य पूर्ण किया था।

सन् १८१७ में डेवीने यूरोपमें भ्रमण करना चाहा और फेराडेको साथ ले जानेका प्रस्ताव किया। नाना देशोंके प्रधान प्रधान वैज्ञानिकोंसे मिलने-जुलनेकी सम्भावना, उनकी कार्यप्रणाली सीखनेकी सुविधा, उनका विज्ञानागार अपनी आखोंसे देखनेका सुयोग फेराडे छोड न सके, केवल पुस्तकें पढ लेनेसेही विद्याशिक्षाकी इतिश्री नहीं हो जाती, इसीलिए यूरोपके कृती छात्र विश्वविद्यालयसे निकलनेके बाद समस्त यूरोपके प्रख्यात अध्यापकोंके विज्ञानशालामें कई वर्ष काम-काज कर शिक्षा पूरी करते हैं। महतोंके संसर्गसे पुण्य संचय होता है, यह अस्वीकार करनेका उपाय नहीं। उनकी बातों और कार्य प्रणालीमें ऐसी एक आकर्षणशक्ति होती है, उत्तेजना का ऐसाभाव होता है कि उनके पास रहनेसे शिक्षार्थी भी उनके भावोंसे अनुप्राणित हुए बिना नहीं रह सकता। इसीसे फेराडेने इस यूरोप यात्रामें प्रकृत शिक्षा प्राप्त की थी।

भ्रमणमें निकलनेका बन्दोबस्त होने लगा। डेवीके साथ उनकी पत्नी, फराडे और एक नौकर जानेवाला था। किन्तु अन्तमें चलते वक्त नौकरने घर छोडकर बाहर जाना कबूल नहीं किया। फेराडे डेवीके सहाकारी रूपमें जा रहेथे, किन्तु साथमें नौकरके न जानेसे उनकी अनिच्छा होनेपर भी नौकरका भी कुछ काम करने पडतेथे। फेराडे यूरोप-भ्रमणकी बातें,

स्मरणीय घटनायें एक वहीपर लिखते जाते थे। उसके पढनेसे जाना जाता है कि यूरोपका प्रवास उनके लिए नितान्त सुख कर नहीं हुआ। विशेषकर डेवीकी पत्नी उनपर प्रभुता दिखानेके लिए उनसे नाना प्रकारके नीच कर्म करानेकी चेष्टा करती थी। वे यह सब सहकर और डेढ वर्पतक यूरोपके नाना देशोंमें घूमकर और अनेक वैज्ञानिकोंसे मिल-जुलकर मानव-प्रकृतिका एव विज्ञान सम्बन्धी अशेप ज्ञान प्राप्तकर सके थे। पहले पहल फ्रांसकी राजधानी पेरिस नगरमें अनेक फरासीसी वैज्ञानिकोंसे उनका साक्षात हुआ। एक दिन आम पियर क्लिमेएट और डेसरेमे नवाविष्कृत आयोडिन नामक मौलिक पदार्थ डेवीको दिखाने लाये थे। डेवीने पेरिसमे उसकी कितने ही प्रकारसे परीक्षा की। वहाँ तीन महीने विता सब इटलीकी ओर चले। उनकी गाडीको ६५ आदिमियोंने हाथ लगा कर आल्प्स पर्वत पर चढाया था। पहले सब टिउरिन शहरमें पहुचे। वहांसे जेनेवाकी यात्राकी। जेनेवामें चलनशील विद्युत् (Current Electricity) के आविष्कर्ता, वयोवृद्ध, ज्ञानवृद्ध वाल्टा (Volta) से भेट हुई। यहाँ डि ला राइव (De La Rive) नामक और एक वैज्ञानिकसे फेराडेका परिचय हुआ। वे फेराडे के गुणोंके इतने पक्षपाती हो गये कि एक दिन डेवी और फेराडेका निमन्त्रणकर भेजा। डेवीने इस निमन्त्रणको स्वीकारनहीं किया, कारण फेराडे उनके नोकरका कोई कोई काम करते थे और इससे वेउ नके साथ खाना न खा सकनेथे। डि ला राइवने इस उत्तरसे दु खितहो कहा— 'ऐसा है तो मुझे एक भोजके वदले दो भोज देने होंगे।" फेराडे उनकी इस सुजनताको कभी न भूले। उनको आजी-

घन इसकी याद उनी रही । पीछे डि ला राइव के पुत्रको फेराडेने लिखा था—"आपके पिताके प्रति कृतज्ञ हूं । वे स्वयं जेनेवामें और अनन्तर चिट्ठी पत्री द्वारा मुझको उत्साहित तथा सजीवित कर रक्खा था ।

डेवी जेनेवासे अपने दलवलके साथ फ्लारेंस पहुचे । यहां फेराडेने गेलिलिओ (Galileo), के व्यवहृत दूरवीक्षण यन्त्रको विस्मयपूर्वक देखा । इस छोटेसे यन्त्रके जरिये पुण्यश्लोक गेलिलिओने नेशगगनके ताराओंसे रातमेंसख्यना स्थापित की थी । गेलिलिओ को वैज्ञानिक सत्यके प्रचारके लिए सरकारने गिरफ्तार किया था किन्तु उनके वादकी पीढियोंने अपना भ्रम जानकर उनकी दूरवीनको वडे यत्नसे सुरक्षित रख छोडा है । फ्लारेंसमें कोई एक महीना वितानर मन रोम पहुँचे । वहाँसे नेपल्स नगर देखकर विसूवियस नामक ज्वालामुखी पर्वतको देखने गये । इसके बाद फिर जेनेवाको लौट आये । वहाँसे नाना देशोंमें भ्रमणकर सन् १८१५ ईसवीके अप्रैल महीनेमें इङ्गलेएड लौट आये ।

फेराडे वापस आकर फिर रायल इंस्टीट्यूशनमें कामकाज करने लगे । अपने शिक्षा गुरु डेवीके साथ काम करते करते डेवीके समान वेज्ञानिक होनेकी आकाक्षा धीरे धीरे उनके मनमें अङ्कुरित होने लगी । सच्चा उपयुक्त गुरु न मिलनेसे साधनाका पथ सुगम नहीं वनता—इसीसे देखते हैं, प्रह्लादने नारदको, शिवाजीने रामदास को, विवेकानन्दने रामकृष्णको, माईकेलने मिल्टनको और फेराडेने डेवीको गुरु वनाया । इसी समयसे फेराडेका वैज्ञानिक जीवन आरम्भ हुआ । १८१६ ईसवी

की १७ वीं जनवरीको "सिटी फिलासफिकल" सोसायटीमें उन्होंने पहले पहल वक्तृता दी। इसी वर्ष उनका पहला मौलिक वैज्ञानिक निवन्ध प्रकाशित हुआ। फेराडेकी प्रतिभा किस तरह धीरे धीरे विकसित हुई अब तक हमने इसका ही परिचय दिया है। अब उनकी वैज्ञानिक गवेषणाओंका कुछ परिचय दे उनकी कथा पूरी करेंगे।

विविध गैसोंका तरलीकरण

(Liquefication of gases)

फेराडे रासायनिक और पदार्थतत्वविद् थे। हम आगे लिख आये हैं कि सन् १८१६ में उनकी पहली वैज्ञानिक गवेषणा प्रकाशित हुई। प्रवन्ध वैसा मूल्यवान न था। उसमें टसकनी देशके चूनेके एक नमूनेका रासायनिक विश्लेषण-फल दिया गया था। सन् १८१६ से सन् १८२० तकमें अर्थात् चार सालके भीतर फेराडेने ४७ मौलिक प्रवन्ध प्रकाशित किये थे। किन्तु जिन वैज्ञानिक गवेपणाओंके कारण फेराडेका नाम अमर हो गया है उनका आरभ अबतक न हुआ था।

वहुतोंने तरलवायु (liquid air) की कथा सुनी होगी। यहाँ हमने अवतक भी तरल वायु आखोंसे नहीं देखी किन्तु विलायतके विज्ञानागारोंमें तरल वायुकी बोतलें की बोतलें प्रयुक्त की जाती ह। साधारण वायुको खूब दवाने और प्राय २०० डिग्री ठडा करनेपर वायु जलकी तरह तरल हो जाता है। इतना ठडा होता है कि उसका एक बूद भी हाथपर गिर पडनेसे हाथमें फोडा निकल आता है। फेराडेने अवश्य ही तरल वायुका आविष्कार नहीं किया किन्तु वे उसके तैयार करने

की प्रणाली सुगम कर गये हैं। सबसे पहले उन्होंने ही नाना गैसोंको तरल बनानेकी प्रणाली निकाली। १८२३ ईसवीमें इस विषय पर उनका पहला प्रबन्ध प्रकाशित हुआ। उसमें क्लोरिन नामक गैसके तरल बनानेकी प्रक्रिया दी गई थी। उन्होंने काचके एक नलके एक मुहको बन्दकर उसमें क्लोरिन हाईड्रेट (Chlorine hydrate) नामक द्रव भरकर दूसरा मुहभी बन्द कर दिया था। अनन्तर जिस मुहपर क्लोरिन-हाईड्रेट था उस मुहपर मन्द मन्द आच पहुचाने लगे और दूसरे मुहको बरफसे ठडा करने लगे। कुछ समयके बाद देखा कि खाली मुहपर तेलके समान थोडा सा पीले रगका कोई पदार्थ जम गया है। उनके पहले नर्थमोर नामक एक रासायनिक ने भी इस प्रकारकी परीक्षा की थी, किन्तु फेराडे इस तरल पदार्थ का स्वरूप अच्छी तरह निश्चय कर सके। उन्होंने परीक्षा द्वारा स्थिर किया कि यह तरल पदार्थ तरलीभूत क्लोरिनके सिवा और कुछ नहीं है। इस प्रकारकी परीक्षासे उनको विदित हुआ कि किसी गैसको तरल बनानेके लिए दो बातोंकी जरूरत पडती है—(१) अत्यधिक दबाव और (२) अत्यधिक ठडकी। काचके मुखबद्ध नलके भीतर क्लोरिन हाईडेट गरम होते थक पहले बाहर निकलनेकी चेष्टा करता है पर बाहर न निकल सकनेपर वह स्वय बहुत दबाव पैदा करता है और बरफसे ठडा किये जानेपर वह तरल बन जाता है।

क्रम क्रमसे इसी उपायसे उन्होंने और भी अनेक गैसोंको तरल बनाया-यथा, सलफर डाईआक्साईड (Sulphur dioxide) एमोनिया (Ammonia) साईयानोजन (Cyanogen)आदि। कुछ समयके बाद फेराडेने एक छोटे पम्पकी सहायतासे दबाव बढा

कर कार्वोनिक एसिड गैस,(Carbonic acid gas)हाईड्रोक्लोरिक् ऐसिड गैस (Hydrocloric acid gas) और हास्योदीपक (Nitrous gas) को तरल बना सके। उस समय जितनी गैसें विदित थीं प्राय उन सबको फेराडेने तरल बनाया। छ गैसें अम्लजन, उद्जन, नत्रजन, कार्वन मानआक्सइड (Carbon monoxide) मार्श गैस (Marsh gas) और नाइट्रिक आक्साइड (Nitric oxide)—वाकी रहीं। बहुत दिनों तक कोई इन गैसोंको तरल न बना सका। वे चिरस्थायी गैस कही जाती थीं। जिस कार्यको फेराडेने आरम्भ किया था उसकी समाप्ति बहुत दिनोंके बाद हुई है। अब दवाव और ठंडी अधिक देनेके लिए वडे वडे यन्त्रोंका अविष्कार हो गया है। उनकी सहायतासे ये चिरस्थायी गैसें भी तरल बनाई जा सकी हैं। पिकटे, पयालिटे, गेल्वाल्स्की, वेलेस्की, डेयोयार, लिण्डे हैमसन आदि अगरेज, फरासीसी, रूसी, और अमेरिकन रासायनिकोंकी जीवन व्यापी चेष्टासे फेराडेका आरम्भ किया काम पूरा हुआ।

वेञ्जिनका आविष्कार

फेराडेका अन्यतम रासायनिक आविष्कार है—वेञ्जिन। "पोर्टेवल गैस कम्पनी" के द्वारा तेलसे बनाई गई गैसकी परीक्षा करते समय उन्होंने इस तरल पदार्थका अविष्कार किया था। रसायनशास्त्रके प्रत्येक छात्रको मालूम है कि इसी वेञ्जनसे ऐन्डियिक (Orgince) रसायनके एक नूतन विभागकी सृष्टि हुई है और अगले समयमें इससे असरव्य एन्ड्रयिक पदार्थोंका आविष्कार हुआ है। बाजारमें आजकल जो विविध और चित्रव

प्रकारके रंग पाये जाते हैं वे सब इसी बेञ्जिनसे रासायनिक प्रक्रिया द्वारा तैयार किये जाते हैं।

इस विषयमें एक बातके उल्लेखकी आवश्यकता मालूम होती है। फेराडे जब क्लोरिन आदि गैसोंको तरल बनानेमें लग रहे थे उस समय उनके किसी किसी बन्धुने पूछा—"इनसे संसारका क्या उपकार होगा। जिससे संसारका कोई हित न हो, उसमें समय नष्ट करना उचित नहीं।" इस प्रकारका प्रश्न अब भी अनेक लोगोंके मुँहसे सुना जाता है। अनेक मनुष्योंका विश्वास है कि विशुद्ध रसायन, पदार्थ विद्या आदि शास्त्रोंमें खोजकी कोई आवश्यकता नहीं, बल्कि इस बातकी चेष्टा करना उचित है, जिससे घड़ी, छाता, जूता, कागज आदि प्रयोजनीय चीजें इस देशमें तैयार होने लगें।

विख्यात अमेरिकन वैज्ञानिक फ्रांकलिन इस प्रकारके प्रश्नों के उत्तरमें कहते थे—"लड़कोंको मनुष्य बनानेसे क्या लाभ है?" जो लोग इस तरहके सवाल करते हैं वे यह भूल जाते हैं कि विशुद्ध रसायन और पदार्थ विद्याकी उन्नति न होती तो इन सब प्रयोजनीय वस्तुओं के तैयार करनेकी विधि मालूम होना असंभव था। वैज्ञानिक गवेषणा बहुत कुछ निष्काम साधनाके समान है। आरंभ की हुई वैज्ञानिक खोज संसार के कुछ काम आयेगी या नहीं, इस बातके विचार करनेका अवकाश वैज्ञानिकों नहीं रहता। किन्तु यह स्मरण रखना होगा कि वैज्ञानिक गवेषणापर पृथिवीके प्रयोजनीय वस्तुओंकी उत्पत्ति निर्भर है। फेराडेने जिस समय जरा सा तरल क्लोरिन तैयार कर लिया था उस वक्त क्या उन्होंने यह सोचा था कि उनके पीछे उनके तैयार किये क्लोरिनकी सैकड़ों हजारों बोतलें

सोनेकी खानमें काममें लाई जायँगी? फेराडेकी दूर-दृष्टिमें कभी यह नहीं सूझा कि उनके आविष्कृत वेञ्जिनसे उनके पीछे सैकड़ों तरहके रंग तैयार किये जायगे। फेराडेकी वैद्युतिक गवेषणा पढ़कर उस समय कौन कह सकता था कि किसी कालमें विश्वमें बिजली एक महान् शक्ति बन जायगी।

विद्युतके सम्बन्धके आविष्कार

आज बिजली सभ्य जगतमें एक प्रधान शक्ति बन रही है, मनुष्यकी उन्नत बुद्धि-कौशलसे प्रकट होकर आज बिजली नौकर की तरह पखा चलाती है, प्रकाश करती है ट्रामगाडी चलाती है, बडे बडे कलों और यन्त्रोंको जोर जोरसे घुमाती है, और और कितने ही काम करती है। बिजलीको मनुष्यके इतने कामोंमें लगानेके लिए जो सब वैज्ञानिक आजीवन परिश्रम कर गये हैं, उनमें माइकेल फेराडेका स्थान बहुत ऊचा है। वे बिजलीके सब यन्त्रोंके बनानेके मूल सूत्रोंका आविष्कार कर गये थे। उनके बादके वैज्ञानिक इन्हीं सब मूल सूत्रोंके सहारे कितने ही विचित्र विचित्र प्रकारके यन्त्र तैयार कर रहे हैं। जब आप बिजलीसे जगमगातेहुए घरोंमें बिजलीसे चलनेवाले पखोंके वायुका सेवनकर सुखका अनुभव करें, उस समय एक बार लोहारके पुत्र माइकेल फेराडेको अवश्य याद करें—वे ही सब वैज्ञानिक यन्त्रोंके मूल सूत्रोंका आविष्कार कर आपके चित्त विनोदका उपाय कर गये हैं।

फेराडे जब दफ्तरीका काम कर रहे थे, उसी समयसे वे बिजलीके सम्बन्धकी परीक्षा करते थे। दस्तेके सात टुकडे और सात आध पेनी ले और उनके बीचमें नमकके पानीसे

तर कपडा रखकर वे वालटायिक वैद्युतिक घट बना, नाना प्रकारकी परीक्षा करते थे । रायल इंस्टीट्यूशनमें डेवीके साथ वैद्युतिक परीक्षाकर बिजलीके सम्बन्धकी बहुतसी बातें उन्होंने जान ली थीं । क्रमसे बिजलीके सम्बन्धकी आलोचना उनके जीवनका एकमात्र लक्ष्य हो उठी । बिजली सम्बन्धी उनके सब आविष्कारोंके परिचय देनेसे एक स्वतन्त्र पुस्तक लिखनी पडेगी। यहाँ हम कई विषयोंकी केवल आलोचना करेंगे।

बिजली और चुम्बकके द्वारा बिजली पैदा करना ।

(Induction)

फेराडेके पूर्व ही यह मालूम हो चुका था कि बिजली और चुम्बकमें एक घनिष्ट सम्बन्ध है । बिजली और चुम्बकमें जो घनिष्ट सम्बन्ध है उसे अराडे और अम्पियरने खूब परीक्षा कर लिया था । फेराडेके पूर्व यह मालूम हो चुका था कि लोहाकी एक सलाई पर ताँबेका तार लपेट देनेसे और उसी तारके भीतरसे बिजलीका प्रवाह प्रवाहित करनेसे लोहा चुम्बक बन जाता है । इसी प्रकार एक ताँबेके तारके, जिसपर बिजलीका प्रवाह प्रवाहित हो रहा है, पास ताँबेके एक दूसरे तार पर विद्युत्का प्रवाह प्रवाहित हो सकता है या नहीं, फेराडे इसीकी परीक्षा करने लगे । सन १८३१ में दस दिनके भीतर इस विषयकी प्राय सब जानने योग्य बातोंका उन्होंने आविष्कारकर डाला ।

प्रथम— फेराडेने ताँबेके तारको रेशमके धागेमें लपेटकर फिर उसे रील या अटी की तरह लपेट कर एक घेरन (Coil)

तैयार किया। तारके दोनों सिरोंको विजलीका प्रवाह दौड़ानेके लिए वैद्युतिक कोष (electric cell) से जोड़ दिया। पूर्वोक्त तारकी अटीपर तारका और एक वेष्टन तैयारकर उसके दोनों मुँह एक विद्युत्- शक्तिपरिमापक यन्त्र (galvanometer) में लगा दिये। इसके बाद भीतरके वेष्टनके भीतर विजलीका एक ऐसा प्रवाह प्रवाहित किया कि बाहरके वेष्टनके भीतर दूसरी ओर विजलीका एक प्रवाह बह गया। और जब भीतरके वेष्टनमें विजलीका प्रवाह रोक दिया तब बाहरके वेष्टनके भीतरसे विजलीका और एक प्रवाह प्रवाहित हुआ। प्रथम प्रवाह जिस ओर प्रवाहित हुआ था उसके दूसरी ओर इसबार प्रवाह प्रवाहित हुआ। विद्युत्शक्तिपरिमापक यन्त्र में लगी लोहे की सलाई के गतिके द्वारा प्रवाहके दिशाका निर्णय होता है। भीतरके वेष्टनके भीतर ठीक जिस समय तार खोलकर या लगाकर विजलीका प्रवाह रोका या दौड़ाया जाता है ठीक उसी समय बाहरके वेष्टनमें विजलीका प्रवाह उठता है, किन्तु भीतरके वेष्टनमें जब बहुत देर तक प्रवाह प्रवाहित होता रहता है तब बाहरके वेष्टनमें बिजलीका प्रवाह प्रवाहित नहीं होता।

द्वितीय—बाहरके वेष्टनकी तरह और एक वेष्टन तैयार कर उसके भीतर चुम्बककी एक सलाई छोड दी। चुम्बकके छोड़ते ही वेष्टनमें विजलीका एक प्रवाह प्रवाहित होते देखा। जबतक चुम्बक भीतर रहा तब तक एक भी प्रवाह न मालूम हुआ। और जब चुम्बककी सलाई जल्दीसे निकाल ली गई तभी दूसरी ओर वेष्टनमें एक प्रवाह प्रवाहित हुआ। इस प्रकार फेराडे विजली और चुम्बक दोनोके जरिये विजलीका प्रवाह पैदा कर सके।

तृतीय—फेराडे इतनेसे ही शान्त न हो बैठे । वे जानते थे कि पृथिवी एक बहुत बडे चुम्बकका काम करती है । इसीसे साधारण चुम्बकका मुख निरन्तर उत्तरकी ओर रहता है । उन्होने सोचा कि जब साधारण चुम्बकसे बिजली पैदा होती है तो पृथिवीसे ही बिजली क्यों न पैदा होगी । इसीसे वे ताँबेके तारका एक वेष्टन चुम्बकीय सूचीपतनके (magnetic dip) क्षेत्रमें रख घुमाने लगे । पूर्वोक्त विद्युत्परिमापक यन्त्रकी सहायतासे देखा कि वेष्टनके चक्करके साथ साथ प्रत्येक वार बिजलीका प्रवाह वेष्टनमें प्रवाहित हो जाता है ।

चतुर्थ—फेराडेने यह भी दिखलाया कि बिजलीका केवल एक प्रवाह पासके एक दूसरे तांबेके तारमें बिजलीका प्रवाह पैदाकर सकता है । यही बात नहीं है, जिस तारके भीतरसे वह प्रवाह प्रवाहित होता जाता है उसी तारमें एक वार निकालते-वक्त और एक वार लगाते वक्त बिजलीके दो प्रवाह पैदा करता है । इस प्रवाहका नाम एकस्ट्रा करेण्ट (extra current) रक्खा ।

फेराडेके इन सब आविष्कारोंसे बिजली पैदा करनेके कितने ही उपाय निकाले गये । उनके पहले विद्युत्कोषसे ही बिजली पैदा होती थी, किन्तु इन कोषोंमे जो मूल्यवान् पदार्थ व्यवहृत किये जाते थे उनको कुछ दिनोंके बाद फेंक देना पडता था । इसलिए बिजली पैदा करना बहुत मँहगा था ।

फेराडेके इन सब आविष्कारोंको मूल सूत्र बनाकर आज कल बडे बडे डाइनामा आदि बिजली पैदा करनेवाले यन्त्र तयार हो गये हैं और इन सब यन्त्रोंसे पैदाहुई बिजलीके द्वारा प्रकाश होता है, पंखे चलते हैं, ट्राम चलती हैं, कलें चलती हैं ।

विजलीके रासायनिक विश्लेषणका नियम।

फेराडेके पूर्व ही यह मालूम हो चुका था कि विजलीमें रासायनिक विश्लेषणकी शक्ति है। सन् १८८० ईसवीमें निकलसन और कार्लाइल नामक दो व्यक्तियोंने विजलीके प्रवाहके द्वारा जलको विश्लिष्टकर उद्‌जन और अम्लजन गैसें बनाई थीं। हम यह आगे लिख ही आये हैं कि डेवीने विजलीके प्रवाहके द्वारा काष्टिक सोडा और पोटास नामके दो तीक्ष्ण क्षारोंको विश्लिष्ट कर दो नई धातुओंका आविष्कार किया था। फेराडेने नाना प्रकारके रासायनिक द्रव्योंके भीतर तडित् प्रवाह प्रवाहित कर विविध परीक्षाओं के वाद एक परिमाणात्मक नियमका (quantitave law) का आविष्कार किया था। उन्होंने यह दिखलाया कि समपरिमाण तडित् प्रवाहके द्वारा १ भाग वजनका उद्‌जन ८ भाग अम्लजन, ३५.५ भाग क्लोरिन, १०३.५ भाग सीसक, १०८ भाग चाँदी और ६५.३ भाग सोना पाया जाता है। आज कल कहा जाता है कि ८ भाग अम्लजन, ३५.५ भाग क्लोरिन, १०३.५ भाग सीसक आदि मौलिक पदार्थ १ भाग तौलवाले उद्‌जनके साथ रासायनिक भावसे सयुक्त रहते हैं। इस रासायनिक सयोगकी तौलको "तुल्य तौल" (equivalent weight) कहते हैं। इसीसे फेराडेने अपने नियमोंको निम्न लिखित रूपमें लिखा—"समपरिमाण तडित् प्रवाह विभिन्न यौगिकसे 'तुल्य तौल' का मूल पदार्थ विश्लिष्ट करता है।" सोने चाँदी पर मुलम्मा करनेकी आज कलकी प्रक्रिया विजलीके रासायनिक विश्लेषण करनेकी क्षमता पर निर्भर होती है।

चुम्बकत्व और पराचुम्बकत्व।

(Paramagnetism and diamagnetism)

फेराडेका एक विशिष्ट आविष्कार वस्तुओंका चुम्बकत्व और अचुम्बकत्व है। सन् १८४५ में फेराडेने यह दिखलाया कि जितनी वस्तुएँ हैं वे साधारण चुम्बकके द्वारा या तो आकृष्ट होती हैं, या विताडित (repelled) होती हैं। उन्होंने कठिन तरल और वायवीय ये तीन प्रकारके द्रव्य लेकर ही परीक्षा की। उन्होंने दिखलाया कि धातुओंमेंसे लोहा, निकेल, कोबाल्ट, मैङ्गनिज, प्लैटिनम आदि धातु चुम्बक जातीय और दस्ता, टिन, पारा, सीसा, चाँदी ताँबा, सोना आदि धातु पराचुम्बक जातीय हैं। धातुओंके सिवा निम्नलिखित वस्तुएँ साधारण चुम्बकके द्वारा आकृष्ट होती हैं अनेक प्रकारके कागज, लाख, ग्रेफाइट, टफूरस्पार, लकडीका कोयला इत्यादि। निम्नलिखित चीजें साधारण चुम्बकके द्वारा विताडित होती हैं—फिटकिरी, काच, चीनी, रोटी, गन्धक इत्यादि। फेराडे ने तरल द्रव्य ले परीक्षा द्वारा देखा कि कितने ही पदार्थोंका जलीय द्रव (solution) चुम्बकात्मक है—यथा लोहे और कोबाल्ट धातुका यौगिक समूह। दूसरी ओर, जल, रक्त, सुरा, तारपीन, तेल, ईथर आदि तरल पदार्थ पराचुम्बक जातीय हैं। इसके बाद वे वायवीय पदार्थोंमें चुम्बकत्व और पराचुम्बकत्व की परीक्षा करने लगे। उन्होंने देखा कि बत्तीका प्रकाश चुम्बकके द्वारा जोरसे विताडित होता है। किन्तु अम्लजन चुम्बकके द्वरा आकृष्ट होता है। पदार्थोंका चुम्बकत्व वा पराचुम्बकत्व गुणका आविष्कार

कर फेराडे एक नूतन शास्त्रका सूत्रपातकर गये हैं। अम्लजनके चुम्बकत्व के कारण पृथिवीके चुम्कत्वकी-ह्रास वृद्धि होती है फेराडेने इसका प्रचार किया था। इस सम्बन्धमें उनकी नाना प्रकार की परीक्षायें उनको अद्वितीय-परीक्षा-कुशल वैज्ञानिक सिद्ध करती हैं।

फेराडेकी और भी अनेक गवेषणायें प्रकाशित हुई हैं। निबन्ध बढ जानेके भय से वे छोड दी गई है। असलमें न्यूटन के सिवा और कोई वैज्ञानिक इतने अधिक आविष्कार कर गया है या नहीं, यह सन्देह की बात है। उन्होंने स्वय एक खाता तैयार किया था और जिस समय किसी विषयमें मनमें कोई बात उठती थी तो उसी खातेमें लिख लेते थे। वे सब वैज्ञानिकों को इसी तरहकी एक नोट बुक रखनेकी सलाह दे गये हैं। इससे अनेक सुविधायें हैं। आज हठात् मनमें किसी विषयकी परीक्षा करनेकी बात उठी, किन्तु कामोंकी भरमारके कारण वह भूल गई इस लिए एक खाता होनेसे इस प्रकारकी भूल होनेकी सम्भावना नहीं रहती।

उनके शिक्षा गुरु डेवीके साथ उनका सद्भाव क्रमश घट रहा था। वैज्ञानिक गवेषणाओंके द्वारा फेराडेका नाम जितनाही बढ रहा था उतना ही डेवीको उनके प्रति ईर्ष्या बढ रही थी। ऐसा प्राय देखा जाता है कि पहले गुरु शिष्यमे अधिक हृद्यता रहती है, अनन्तर प्रतिभाशाली शिष्य जब अपनी प्रतिभाके गुणसे गुरुके सामने ही उठता है तब गुरु और शिष्यमें पूर्वभाव नहीं रहता, प्रति द्वन्द्विताका भाव आ दिखाई देता है। डेवीकी अवस्था भी वैसी ही हो गई थी। जब फेराडेको विख्यात रायल सोसायटीका सभासद

बनानेका प्रस्ताव हुआ था, उस समय डेवीने सभाके सभापतिकी हेसियतसे यथासाध्य बाधा देनेकी चेष्टा की थी। जिस दिन वोट लिया गया था, उस दिन वेलेट बाक्स पर केवल एक काली गेंद देखी गई थी। उसे किसने फेंका था यह फेराडेको समझना बाकी न था। इसी प्रसङ्गमें यह कह देना भी आवश्यक है कि किसी वैज्ञानिकने अपनी जिन्दगी भरमें स्वदेश या विदेशसे फेराडेके समान सम्मान प्राप्त नहीं किया। फेराडेको सब ९५ सम्मान—सूचक पदवियां और खिताब मिले थे।

फेराडेका चरित्र अत्यन्त पवित्र और स्वभाव अत्यन्त मधुर था। २९ वर्षकी अवस्थामें सारा बार्नार्ड नामकी स्त्रीके साथ उन्होंने विवाह किया था। विवाहके २८ वर्ष बाद उन्होने अपने खातेमें लिखा था —"१८२१ ईसवीके १२ वी जूनको मैंने विवाह किया था। इस विवाहसे अन्यान्य विषयोंकी अपेक्षा मुझे समधिक मानसिक आनन्द और पार्थिव सुख प्राप्त हुआ है। हम लोग आज २८ वर्षसे विवाह बन्धनमें बधे हैं। इस बीचमें दाम्पत्य प्रणयकी गाढता-वृद्धिके सिवा किसी प्रकारका परिवर्तन नहीं हुआ।" विवाहके बाद उन्होंने रायल इन्स्टीट्यूशनमें एक घर अलहदा पाया था। वहीं वे सपरिवार रहते थे।

१८३५ ईसवीमे इङ्गलैण्डके प्रधान सचिव सर रावर्ट पिलने फराडेको ३०० पाउन्ड की सालाना पेंशन देने की इच्छा प्रकट की। फेराडे पहले इसे लेनेको राजी न हुए, कारण वे कहते थे कि अपनी जीविका पैदा करनेकी क्षमता मुझमें अभीतक है। अन्तमें बन्धुबान्धवोंके अनुरोधसे वे राजी हो गये थे। सर रावर्ट पिलकी इच्छा पूर्ण होनेके पहले ही लार्ड मेलबोर्नको प्रधान सचिवका पद मिला। नये सचिवने फेराडेसे मिलनेकी

इच्छा प्रकट की। फेराडे मिलने गये। लार्ड मेलवोर्न फ़ेराडेको ठीक पहचान न सके। फेराडेका स्वभाव वालकोंके समान सरल था पर, उनमें प्रकृत मनुष्यत्व की दृढता यथेष्ट थी। प्रधान सचिवकी बातोंसे फेराडे बहुत विरक्त हुए थे। लार्ड मेलवोर्न ने बातों ही बातोंमें सम्भवत कहा था कि वैज्ञानिकों और साहित्यिकोंको पेंशन देना रुपयेका अपव्यय करना है। फ़ेराडेने घर पहुँचने ही लार्ड मेलवोर्नको एक पत्र लिखा। उसमें उन्होंने उनकी बातोंपर अपनी विरक्ति प्रकट की और प्रस्तावित पेंशन लेने की अनिच्छा प्रकट की। अनन्तर एक सम्भ्रान्त महिलाने दोनोंमें मेल-जोल करानेका यत्न किया। फेराडेने उससे कहा कि यदि लार्ड मेलवोर्न पत्र लिखकर अपनी बातोंके लिए क्षमा माँगे तो यह विवाद मिट जाय। लार्ड मेलवोर्नने, यह खबर पाकर फ़ेराडेको एक पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने अपनी उस दिन की बातोंपर अत्यन्त दुःख प्रकट किया और क्षमा माँगी। इस प्रकार इस विवाद का अन्त हुआ। फेराडेको अन्तकाल तक पेंशन मिलती रही। इस घटनासे फेराडेके उन्नत मनुष्यत्व का परिचय अच्छी तरह मिलता है। अत्यधिक मानसिक और शारीरिक परिश्रमसे उनका शरीर पहलेसे ही निर्बल हो गया था। सन् १८६७ की २५ जनवरीको सतहत्तर वर्ष की अवस्था में उनका देहवसान हुआ।

लिखने पढनेके अपने कमरेमें बैठे बैठे ही उन्होने शरीर त्याग किया। उनकी इच्छाके अनुसार बिना आडम्बरके उनको समाधि दी गई। आज इसी उन्नतचेता बालकवत् चिरसरल, वैज्ञानिकश्रेष्ठ अङ्गरेज के समाधि-फलक पर सुदूर विदेशवासी एक भक्त भक्तिपुष्पाञ्जलि चढ़ाकर अपनेको धन्य समझता है।

पाँचवाँ परिच्छेद

निउटन ।

जैसे शिव नटकुलचूड़ामणि हैं पर्वतोंमें जैसे हिमालय श्रेष्ठ है, तारका-सुन्दरियोंमें जैसे रोहिणी वरणीया है, जैसे कवियोंमें कालीदास श्रेष्ठ- वैसेही वैज्ञानिकोंमें निउटन सर्वश्रेष्ठ है। केवल अङ्गरेजही क्यों, पृथिवीकी यावतीय सभ्य जातियोंने एक वाक्यसे निउटनको सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक का आसन दिया है। अथच यह आत्माभिमानशून्य कर्मवीर मरनेके पहले कह गया था—"मुझे मालूम नहीं, संसार मेरे कामोंके सम्बन्धमें क्या सोचेगा किन्तु मैं खुद सोचता हूँ कि मैंने ज्ञानसमुद्रके तीरपर बैठकर छोटे बच्चेकी तरह केवल कंकड़ जमा किये हैं और सारा विशाल ज्ञानसमुद्र मेरे सामने अनाविष्कृत पड़ा है।"

सन् १६४२ ईसवीमें, इंगलेण्डके अन्तर्गत लिंकन शायरके सौलथ उल्सथर्प नामक गाँवमें निउटनका जन्म हुआ था। जो एक समय विश्वके आकर्षणका आविष्कार कर यशस्वी होंगे, वे जन्मकालमें इतने छोटे थे कि उनकी माताने कहा था कि वे उनको एक बोतलमें अनायास ही रख सकती हैं। भूमिष्ठशिशु इतना दुर्बल था कि दो स्त्रियाँ दूसरे गाँवसे उसके लिए औषध लेनेके लिए जाते वक्त यह नहीं खयाल करती थीं कि वे लौट आकर बच्चेको जीता-जागता देखेंगी। जो हो, ब्रह्माने पृथिवीके मंगलके लिए जिसे जन्म दिया था, उन्हींने ही उसकी जीवन रक्षा की।

जाते? वृत्ताकार क्यों घूमते हैं? समतलक्षेत्रपर एक गोली ढुनगा देनेसे वह हवा या क्षेत्रकी घर्षणजनित बाधा न पड़ने पर बराबर सीधी ढुनकती जायगी। फिर ग्रह-उपग्रह ही सीधे क्यों नही चले जाते? कौन सी शक्ति उनको घुमाती रहती है? वे इसका कारण किसी तरह निश्चित न कर सके।

इस प्रकारकी मानसिक अवस्थामें प्लेगके साल वे अपने गाँवको चले गये। वहाँ भी उस चिन्ताने उन का पीछा नछोड़ा। एक दिन बागमें बैठे इस प्रकारकी चिन्ता कर रहे थे कि एक पका सेव (apple) जमीनपर जोरसे गिरा। उन्होंने उसकी ओर लक्ष्य किया। उसी समय मन ही मन यह प्रश्न उठा कि सेब क्यों गिर पड़ा। मन ही मन उसी समय उसका जवाब भी मिला—"पृथिवीने सेवका आकर्षण किया है, इससे वह जमीन पर गिर पड़ा। जैसे पानीमें डूबता हुआ व्यक्ति सामने लकड़ी देख कर, अथवा अँधेरे घरमें पड़ा कैदी अप्रत्याशित क्षीण प्रकाश देखकर पुलकित हो उठता है, निउटन भी इस प्रकार का अप्रत्याशित मानसिक उत्तर पाकर उसी प्रकार आनन्दित हुए। पृथिवीका आकर्षण इसके पहले आविष्कृत नहीं हुआ था, यह बात नहीं है। निउटनके छ सात सौ वर्ष पहले भारतके वैज्ञानिकोंके उज्ज्वल भास्कर भास्कराचार्य कह गये हैं —

आकृष्टशक्तिश्च मही तया यत् स्वस्थगुरु स्वाभिमुख स्वशक्त्या॥
आकृष्यते तत् पततीव भाति समे समन्तात् क पतत्वियं मे॥

अर्थात् पृथिवीमें आकर्षण करनेकी शक्ति है। उसी शक्तिके बलसे शून्य मार्गमें फेंकी गई भारी चीज पृथिवीकी ओर आकर्षित होती है और इससे ही सब वस्तुयें पतनशील कहीं जाती हैं और पृथिवीके चारों ओर आकाश होनेसे यह कहाँ

ारे? इसलिए पृथिवीका आकर्षण प्राचीन कालमें भारतमें ाविष्कृत हुआ था कह कर भारतवासी गौरव प्रकट कर सकते है।

निउटनने पृथिवीके इसी आकर्षणको वैज्ञानिक भित्ति ार स्थापितकर उसे विश्वके आकर्षणके अङ्गीभूत बता प्रतिष्ठित किया था और इसी विश्वाकर्षणके सम्बन्धमें परिमाणात्मक नियम (quantitative law) का भी आविष्कार कर समग्र ज्योतिषशास्त्रको नये सूत्रमें गूथ दिया था।

निउटन ने सोचा कि जब पृथिवी छोटेसे सेव को या ऊपर फेंकी गई वस्तुमात्रको आकर्षित कर सकती है तब वह अपनेसे छोटे आकारवाले चन्द्रमाको आकर्षित क्यों न करेगी? यदि पृथिवी चन्द्रमाको आकर्षित करती है तो सबसे बडी ज्योति सूर्य, पृथिवी और ग्रह नक्षत्रोंको आकर्षित क्यों न करेगी। निउटनने क्रमशः स्थिर किया कि यही विश्वाकर्षण ही ज्योतियोंको शून्यमार्गमें, वृत्ताकारमें, घुमाता है। पाठकोंको निउटनका सिद्धान्त सहज ही समझाया जा सकता है। एक डोरीके टुकडेमें यदि ईंटका एक टुकडा बॉधकर घुमाते घुमाते छोड दिया जाय तो ईंटका टुकडा सीधा चला जायगा, किन्तु घुमाते समय डोरी हाथमें होनेके कारण वह वृत्ताकार घूमता रहता है। प्रति मुहूर्त्त ईंटके टुकडेपर दो शक्तियाँ काम करती हैं—एक शक्तिके द्वारा वह सीधा चले जानेके लिए व्यस्त रहता है और दूसरी शक्ति अर्थात् हाथका आकर्षण उसकोसीधा जानेकी गतिको लगातार घुमा देता है। इस प्रकार ईंटका टुकडा हाथके द्वारा आकृष्ट होनेपर भी हाथमें नहीं आता, वृत्ताकार घूमता है। इसी प्रकार चन्द्रमा किसी अज्ञात

शक्तिके प्रभावसे चलता है। वह यदि पृथिवीके द्वारा आकृष्ट न होता तो सीधा चला जाता। किन्तु पृथिवीके द्वारा आकृष्ट होनेसे पृथिवीके चारो ओर घूमता है। इसी प्रकार इस आकर्षण के कारण सूर्यको केन्द्र बनाकर अन्य ज्योतियाँ उसके चारों ओर घूमती हैं।

इस प्रकार निउटन अपने मानसपथपर चक्कर लगानेवाली ज्योतियोंका रहस्यमय चित्र खींचने लगे। वे इस आकर्षण शक्तिका ही आविष्कार कर शान्त न हो रहे, उन्होंने आकर्षण का परिमाण जाननेकी चेष्टा की। विख्यात ज्योतिषी केपलरने निउटनके पहले यह आविष्कार किया था कि ज्योतियाँ सूर्य को केन्द्र बना कर दीर्घवृत्ताकारमें (ellipse) चारो ओर घूमती हैं। इस प्रकार भ्रमणकालमें ग्रहोंके सूर्यके निकट होनेपर या सूर्यसे दूर होनेपर आकर्षणमें क्या विभिन्नता होती है, निउटन इसकी गणना करने लगे। इस प्रकार की गणनाका फल यह देखा कि सूर्यसे जितनी ही दूर ग्रह चले जाते हैं आकर्षण उतने ही निर्दिष्ट परिमाणमें कम हो जाता है। उन्होंने यह स्थिर किया कि यह आकर्षण दूरीके वर्गफलके विपरीत घटता है (inversely as the square of the distance), जैसे—यदि दूरी दूनी हो तो आकर्षण चतुर्थांश हो जायगा, यदि तिगुनी तो आकर्षण नवमांश हो जायगा इत्यादि।

विश्वके आकर्षणके सम्बन्धमें इस परिमाणात्मक नियमके आविष्कार करनेके बाद अपने सिद्धान्तकी सत्यता प्रमाणित करनेके लिए वे इसकी गणना करने लगे कि चन्द्रमाकी गति पृथिवीके आकर्षण द्वारा कैसे नियन्त्रित होती है। इस गणना-

में पृथिवीके केन्द्रसे पृथिवीकी परिधि पर्यन्तकी दूरी जानना आवश्यक है। किन्तु उस समय पृथिवीकी परिधि या व्यास ठीक मालूम न था। जो मालूम था उसके आधारपर उन्होंने हिसाब लगाकर देखा कि उनकी गणना और परीक्षाके द्वारा चन्द्रमाकी जो गति निकलती है वह मिलती नहीं। चन्द्रमाकी परीक्षित गति उनकी गणनाकी अपेक्षा कुछ अधिक निकलती है। वे इस अन्तरको न मिला पाये और इसलिए उन्होंने कागज-पत्र सब दराजमें बन्दकर दिये। इसके बाद कई साल बीत गये। इस दीर्घकालके भीतर उन्होंने अपने आविष्कारके सम्बन्धमें न तो कोई प्रबन्ध प्रकाशित किया और न इस सम्बन्धमें किसीसे कोई बात कही। सन १६७२ में एक दिन रायल सोसायटीके अधिवेशनमें पिकार्ड नामक एक फरासी वैज्ञानिक का एक निबन्ध पढ़ा गया। इस प्रबन्धमें उन्होंने पृथिवी की परिधि ठीक ठीक निर्द्धारितकर बताई थी और उनकी निर्द्धारित परिधि प्रचलित मापसे कुछ अधिक निकली थी। निउटनको पहले यह सवाद न मिला। कई सालके बाद इसी सवादको पाकर ही वे घर गये और पुराने कागज पत्र निकाल कर फिर गणना करने लगे। इस बार हिसाब ठीक मिल गया। कहा जाता है कि जब हिसाब लगाते लगाते उन्होंने देखा कि उनका हिसाब मिलता दिखाई देता है तब वे आनन्दसे इतने विचलित हो उठे थे कि हिसाबका शेष फल निकालनेके लिए उन्हें अपने एक बन्धुसे अनुरोध करना पड़ा था। इस प्रकार उनकी सुदीर्घ कालव्यापी साधना सफल हुई थी ;— उन्होंने अनन्तज्योतियों की गति का कारण ठीक ठीक आविष्कृत किया था।

"प्रिंसिपिया" ग्रन्थ।

इसके बादसे वे लगातार कई साल अनन्यमनसे विश्वाकर्षणके सम्बन्धमें चिन्ता करने लगे ; और अपनी गवेषणाका फल जगत्के सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ प्रिंसिपियामें सन्निविष्ट करने लगे। वे इस समय चिन्तामें इतना डूबे रहते थे कि प्राय नहाना-खाना भूल जाते थे। एक दिन उनके एक बन्धु, डाक्टर स्टक्ल उनसे मिलने गये। उन्होंने उनसे भेट कर देखा कि एक टेबल पर निउटनके लिए खाने की चीजें ढकी रक्खी हैं। डाक्टरने कुछ क्षणके बाद धीरे धीरे भोजन खतम कर मुरगी की हड्डियाँ प्लेट पर रख प्लेटको फिर वैसे ही ढक दिया। इसके बाद निउटनने जब बन्धुके साथ बातें करते करते भोजन करनेके लिए प्लेटका कपड़ा उठाया तो आश्चर्यके साथ बोल उठे—"आ! मैंने सोचा था कि मैंने शायद अब तक नहीं खाया है पर देखता हूं, मैं खा चुका हूं।" इस प्रकार की एकाग्रता इस प्रकारका अध्यवसाय न होता तो प्रिंसिपिया की तरहका अमूल्य ग्रन्थ न लिखा जा सकता। नवाविष्कृत विश्वाकर्षणके सिद्धान्तसे बहुतसे नये सिद्धान्त अङ्कशास्त्र की सहायतासे आविष्कृत कर इसी ग्रन्थमें सन्निविष्ट कर दिया। अङ्गरेजोंके परम दुर्भाग्यसे इस संसारका श्रेष्ठ वैज्ञानिक ग्रन्थ अङ्गरेज-द्वारा लिखे जाने पर भी अङ्गरेजीमें नहीं लिखा गया। वह उस समय की प्रचलित प्रथाके अनुसार लैटिन भाषामें लिखा गया। जिस समय इस महाग्रन्थका पहला भाग समाप्त हुआ तब उसे प्रकाशित करने की कल्पना निउटनके मनमें पैदा न हुई थी। इसीसे उन्होंने अपने हस्तलेखको एक दराजमें बन्द कर रख दिया। इच्छा थी कि उनकी मृत्युके बाद इसे

कोई प्रकाशित करेगा किन्तु सन् १६८४ में विख्यात ज्योतिषी एडमण्ड हाल ने प्रिंसिपिया की हस्तलिपि निउटनसे ले ली और १६८७ ईसवीमें अपने खर्चसे उसे छपाया। जब वह प्रकाशित हुआ था तब वैज्ञानिक समाजके दस पाँच मनुष्य भी उसे समझ सके थे या नहीं यह सन्देहपूर्ण है। सन् १७१३ में प्रिंसिपियाका एक नया संस्करण निकला। वह संस्करण अब तक विद्यमान है। यहाँ इस महाग्रन्थके प्रतिपाद्य विषयों का सम्यक् परिचय देना असम्भव है, इसलिए नीचे कुछ विषयोंका सार मात्र दिया गया है—

, विश्वाकर्षणका नियम—इस जगत्का प्रत्येक अणु एक दूसरेको आकर्षित करता रहता है। यह आकर्षण शक्ति प्रत्येक अणुके भारके अनुसार और दूरत्वके वर्गफलके विपरीतानुयायी होती है। (varies directly as the mass and inversely as the square of the distance)

गति नियमावली—(Laws of motion) गेलिलिओने परीक्षाके द्वारा गतिशील वस्तुओंके सम्बन्धमें जिन तीन नियमोंका आविष्कार किया था, निउटनने उनका विशद रूपसे वर्णन किया और उनकी विशद व्याख्या दी। उन्होंने इन सब नियमोंकी सहायतासे गिरनेवाली चीजोंकी गतिके नियमकी गणना की और उनके पथके स्वरूपका भी निर्णय किया।

केपलर की आविष्कृत नियमावली—केपलरने ज्योतियों की गतिके सम्बन्धमें जिन तीन नियमोंका आविष्कार किया था निउटनने उनकी विशद व्याख्या की और उससे विश्वा

कर्षणके दूरत्वमूलक नियमों और अन्यान्य कितने ही नियमोंका आविष्कार किया।

वस्तुओंका वजन और ज्योतियोंका आपेक्षिक गुरुत्व— उन्होंने निश्चित किया कि विश्वाकर्षण ही द्रव्य समूहके भारका कारण है और सूर्य, यह भी निश्चित किया कि चन्द्रमा प्रभृति पृथिवी की अपेक्षा कितने गुने गुरु या लघु हैं—जैसे चन्द्रमा पृथिवी की अपेक्षा प्राय तिरासी गुणा लघु और सूर्य ३१६००० गुणा भारी है।

ज्वारभाटाका कारण—उन्होंने दिखलाया है कि चन्द्रमा और सूर्यके आकर्षणके कारण ही समुद्रमें ज्वारभाटा उठता है। ज्वारभाटाके परिमाणका भी उन्होंने हिसाब लगाया था।

पृथिवीका आकार—उन्होंने केवल गणनामात्रसे प्रमाणित किया है कि पृथिवी बिलकुल गोली नहीं है, उत्तर-दक्षिणमें कुछ चपटी है, कितनी चपटी है इसका भी ठीक निर्णय किया है। उन्होंने दिखाया है कि भूमध्यरेखाका व्यास मेरुरेखाके व्याससे २८ मील बड़ा है।

ग्रहोंके पारस्परिक आकर्षणसे उनकी गतिकी विकृति— उन्होंने देखा कि प्रत्येक ग्रह जो केवल सूर्यके द्वारा ही आकृष्ट नहीं होते, अन्यान्य ग्रहोंके द्वारा भी आकृष्ट होते रहते हैं, इसीसे उनकी गति बहुत तरहसे विकृत होती रहती है। उन्होंने इन सब व्यापारोंकी वैज्ञानिक व्याख्या की और उनका परिमाण भी निर्द्धारित किया।

धूमकेतु—उन्होंने यह भी दिखलाया कि अनिश्चित धूमकेतु [illegible] अधीन हैं और वे परवलय (parabola) के

आकार में सूर्यके चारो ओर घूमते रहते हैं । उनके पुनरागमन-के समयकी गणना भी की जा सकती है ।

इन सब उपरिलिखित तथ्योंके अतिरिक्त और बहुतसे भिन्न भिन्न ज्योतिष-सम्बन्धी व्यापारोंकी गणना और व्याख्या भी इस महाग्रन्थमें दी गई है । उन्होने ग्रन्थके अन्तिम भागमे इस अनन्त विश्वब्रह्माण्डकी स्थिति और गतिका अनन्त सौन्दर्य मन ही मन निरीक्षण कर भक्तिपूर्वक ब्रह्माको प्रणाम कर विदा ली है । पाठकोंको यह समझाना न होगा कि इस विश्वाकर्षणके आविष्कारके साथ ही ज्योतिषशास्त्र एक नया शास्त्र बन गया है ।

विश्वाकर्षण और प्रिंसिपिया ग्रन्थ की आलोचना करने के कारण निउटन के जीवन की घटनाओं का उल्लेख करने का अवसर नहीं मिला । हम सन् १६६५ में प्लेग के साल उनको अपने घरके बागमें बैठे वृक्षसे गिरे हुए सेवके सम्बन्ध में चिन्ता करते छोड आये हैं । सन् १६६१ में वे उसी कालेज के फेलो चुने गये, जिसमें वे पढ़ते थे और दो साल बाद केम्ब्रिज विश्वविद्यालयके विख्यात लिउके-शियन अध्यापक के पद पर, डाक्टर बैरो के स्थान पर नियुक्त हुए । डाक्टर बैरोने अवसर ग्रहण करते वक्त अङ्कशास्त्र में निउटन की असाधारण पारदर्शिता देख कर स्वयं ही उनकी नियुक्ति के लिए अनुरोध किया था । इस प्रकार निउटन केवल २६ वर्षकी उम्रमें केम्ब्रिज विश्वविद्यालय के अध्यापक नियुक्त हुए । क्रमश उनकी कीर्ति फैलती जानेमे सन् १६७२ ईसवीमे वे विख्यात रायल सोसायटी के सभ्य चुने गये । यह पहले ही कहा जा चुका है कि सन् १६८७ में

उनका प्रिंसिपिया ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। इसके पाँच वर्ष बाद वे पार्लामेंट के सभासद निर्वाचित हुए। सन् १६६६ में टकसाल का काम उनको सौंपा गया। सन् १७०३ में वे रायेल सोसायटी के सभापति निर्वाचित हुए और यावज्जीवन इस पद पर प्रतिष्ठित रहे।

सूर्यालोक विश्लेषण

(Dispersion of Sunlight)

यह पहले ही लिखा जा चुका है कि सन् १६६६ से १६७२ या इसके कुछ वर्ष बाद तक निउटनकी विश्वाकर्षण सम्बन्धी गवेषणा बन्द थी। किन्तु इससे यह न समझना चाहिए कि इतने वर्ष वे हाथ पर हाथ रक्खे बैठे रहे। इस समय उन्होंने आलोकशास्त्र (optics) की ओर ध्यान दिया था और अलोकके सम्बन्धमें बहुत सी खोज उन्होंने कर डाली थी। वे स्वय कह गये हैं कि जिस विषय की गवेषणा करनी हो उस विषयमें एकबारगी अनन्यमना हुए बिना आशानुरूप फल नहीं होता। उन्होंने अपनी स्वभावसिद्ध एकग्रतासे आलोकशास्त्रके कई आविष्कारों म ये कई वर्ष बिता दिये। इन्द्रधनुपका विचित्रवर्ण देखा है न? किन्तु यह विचित्र वर्ण हो कैसे जाता है? सत्रहवीं शताब्दी में एनटानिओ डमिनिस नामके एक पादरीने इन्द्रधनुप की ठीक वैज्ञानिक व्याख्या करनेकी चेष्टा की थी। पादरी महाशय कह गये हैं कि जलविन्दु पर सूर्यकी किरणें पड़कर इन्द्रधनुपकी सृष्टि करती हैं। उनके बाद डेकार्ट ने दिखाया था कि सूर्यकी किरणें एक त्रिशिरा (prism) काच के भीतर डालने से इन्द्रधनुप की तरह विचित्र रंग

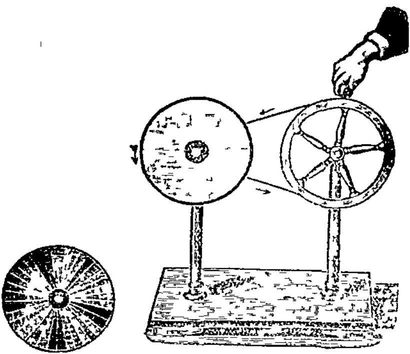
पैदा करती है। किन्तु निउटनके पहले कोई भी स्थिर न कर सका था कि क्यों और कैसे इस प्रकारका विचित्र रंग पैदा होता है।

निउटनने एक अँधेरे घरकी खिड़कीमें एक गोला सूराख कर उसके द्वारा सूर्य की किरणे भीतर ला और एक त्रिशिरा काचके भीतर पहुँचाकर देखा कि दूसरी ओर के एक पर्देपर एक लम्बे इन्द्रधनुषका विचित्र वर्णचक्र (spectrum) दिखाई दे रहा है। उसमें उन्होंने सात रंग देखे। सबसे नीचे लाल, उसके ऊपर नारंगी रंग, उसके ऊपर हरिद्रा रंग, सब्ज रंग, नीला रंग, गाढा नीला रंग, और सब के ऊपर बैंगनी रंग देखा। असलमें उसमें सात ही रंग नहीं होते—असंख्य रंग होते हैं, पर उनमेंसे सातही अच्छी तरह स्पष्ट होते हैं। अब निउटन ने ये दो बातें सोचीं कि यह विचित्र वर्णछत्र सूर्यके सफेद प्रकाशसे कैसे पैदा हुआ और वर्णछत्र गोला न होकर लम्बा क्यों बना? इन दो प्रश्नोंकी मीमांसा करनेके लिए उन्होंने वर्णछत्रके प्रत्येक रंग को एक एक कर एक दूसरे त्रिशिरा काच में पहुँचा कर और एक पर्दे पर देखा। उससे उन्होंने दो बातें लक्ष्य कीं। एक, इन सात रंगोंमें से कोई भी त्रिशिरा काच के भीतर जा दूसरे रंगमें परिणत नहीं होता लाल रंग लाल ही रहता है, बैंगनी बैंगनी ही रहता है। दूसरी, वर्णछत्रमें जो रंग जहाँ है वहीं वे अब भी एक दूसरे पर दिखाई देते हैं। इससे उनको अपने दोनों प्रश्नोंके उत्तर मिल गये। पहले प्रश्नका उत्तर स्थिर किया कि जब लाल आदि सात रंग विश्लिष्ट हो दूसरे रंग में नहीं बदल जाते तब उनका आदि

रंग (primitive colours) और सूर्यके आलोकमें इन सातोंके आदि रंग की समष्टि वा सम्मिश्रण है। त्रिशिरा काचके भीतर जाते वक्त श्वेत आलोक विश्लिष्ट हो सात आदि रंगोंमें परिणत हो जाता है। उनके दूसरे प्रश्नका भी उत्तर मिला। उन्होंने देखा कि सात रंग त्रिशिरा काचके भीतर जाते वक्त विभिन्न परिमाण में टेढा पडता है (refracted), लाल रंग सबसे कम टेढा पडता है और बैंगनी सबसे अधिक टेढा पडता है और दूसरे रंग इन दो रंगोंके मध्य परिमाणमें टेढे पडते हैं। इसी कारण लाल रंग सबसे नीचे रहता है और बैंगनी सबसे उपर, और दूसरे रंग इन दोनोंके बीचमें रहते हैं। इस प्रकार रंगोंके कारण भिन्न भिन्न स्थानोपर जमानेसे वर्णछत्र लम्बा हो जाता है।

इन सब परीक्षाओंके द्वारा निउटनने ही दो बातों का आविष्कार किया—सूर्यके आलोकका यह रंग नहीं। यह सात रंगोंकी समष्टि वा सम्मिश्रण है, दूसरे, काचके भीतर जाते वक्त प्रत्येक रंग विभिन्न रूप से टेढ़ा पडजाता है। निउटन केवल श्वेत आलोकको ही विश्लिष्टकर शान्त नहीं हुए। वे सात आदि रंग मिलाकर श्वेत रंग प्रस्तुत भी कर गये हैं। एक बडे कार्ड बोर्डके टुकडेके पॉच हिस्से कर पूर्वोक्त सात रंगकी स्याहीसे रंगकर पॉच वर्णछत्र बनाये। इसके बाद उस टुकडेको एक घुमानेके यन्त्र में रख जोर जोर से घुमाने लगे। घुमाते वक्त सात रंग एक साथ दिखाई पडने के बजाय मिल कर सफेद या कुछ धुँधले रंग के दिखाई देने लगे। बिल्कुल सफेद न दिखाई देनेका कारण केवल यह था कि सब स्याहियोका रंग वर्णछत्रके सात रंगोंके ठीक समान न हुआ था।

निउटन श्वेत आलोकके स्वरूपका आविष्कार कर रंगके स्वरूपके सम्बन्धमें आलोचना करने लगे। उन्होंने सोचा, चीजोंका रंग उनका नहीं, प्रकाशमें उनका वह रंग है। लाल रंगकी चीज लाल रंगकी जो दिखाई देती है उसका कारण यह है कि वह वस्तु लालके सिवा दूसरे रंगके आलोकका शोषण कर लेती है। केवल लाल रंग



का शोपण नहीं कर सकती। नीले काचके भीतर सूर्यका प्रकाश जानेसे प्रकाश नीला हो जाताहै। इसका कारण यह है कि नीला काच सूर्यके आलोकके और सब रंगोंके आलोकका शोषण कर लेता है, केवल नीले प्रकाशको

भीतर जाने देता है। निउटनका यह नया मत प्रचलित मत के बिलकुल विपरीत था। कितनोहींने उनके इस मतके खण्डन करनेकी चेष्टा की थी, किन्तु कोई कृतकार्य न हुए।

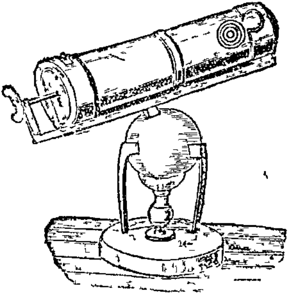
"आप्टिक्स्" ग्रन्थ

निउटन आलोकके सम्बन्धमें और भी अनेक आविष्कार कर गये हैं। आलोक सम्बन्धके उनके विविध आविष्कार उनके दूसरे महाग्रन्थ 'आप्टिक्स्" (optics) में दिये गये हैं। वे और कुछ न कर यदि केवल इसी ग्रन्थकी ही रचना कर जाते तो भी वे वैज्ञानिक समाजमें यथेष्ट प्रतिष्ठा पा सकते। यहाँ उन सब आविष्कारोंका विस्तृत परिचय देना सभव नहीं और इसलिए केवल दो एकका उल्लेख मात्र किया जाता है।

नवीन दूरबीनका आविष्कार

इटलीके सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक गेलिलिओने पहलेपहल दूरबीनका आविष्कार किया था। किन्तु उनके यन्त्रमें काच का बना उन्नतोदर लेन्स (convex lens) लगानेसे पूर्वोक्त वर्णछत्र चारों ओर दिखाई पडता था। उससे शकल अस्पष्ट दिखाई देती थी। निउटनने काचके लेंसको त्याग कर साफ उज्ज्वल धातुका बना नतोदर दर्पण (concave metallic mirror) लगाया। इस प्रकारकी दूरबीनको "परावर्तनीय दूरवीक्षण यन्त्र" (reflecting telescope) कहते हैं। आजकल जो बडी बडी अनेक दूरबीनें प्रचलित हैं वे निउटनके आविष्कृत यन्त्रके ढग की बनी हैं। उनकी बनाई दूरबीन रायेल

रायल सोसायटीमें अब भी सुरक्षित रक्खी है। उसका एक चित्र यहाँ दिया जाता है।



निउटनका दूरवीक्षण यन्त्र

षष्ठांश यन्त्र— sextant) आजकलके नाविक जिस षष्ठांश यन्त्र को काममें लाते हैं उसके आविष्कारक निउटन ही हैं।

आलोक के स्वरूपके सम्बन्धमें सिद्धान्त

आलोक कैसे पैदा होता है, इस सम्बन्धमें निउटनका मत यह था कि आलोकित द्रव्यसे खूब सूक्ष्म सूक्ष्म पदार्थ निकलकर आँखोंमें पहुँचनेसे आलोक उत्पन्न होता है। इस सिद्धान्त को आलोकका निर्गम सिद्धान्त (emission theory) कहते हैं। आलोकके सम्बन्धमें निउटनका यह सिद्धान्त प्रचलित नहीं। अब यह स्थिर हो गया है कि ईथर (ether) या व्योम नामक सर्वत्र विद्यमान अत्यन्त सूक्ष्म पदार्थके हिलनेसे आलोककी उत्पत्ति होती है।

पहले ही कहा जा चुका है कि निउटन आविष्कार करके ही रहजाते थे, जनसमाजमें उस आविष्कारका प्रचार करनेकी कल्पना प्राय उनके मनमें न उठती थी। इसका फल यह होता था कि कभी कभी अपने आविष्कार की मोलिकताके विपयम दूसरोंसे विवाद करना पडता था। सन् १६६५ में उन्होंने शून्य-वृद्धि-सिद्धान्त (Theory of fluxions) का आविष्कार किया था, किन्तु बहुत समय के बाद अर्थात् सन् १६८७ में वह प्रकाशित हुआ। जर्मनीके प्रसिद्ध वैज्ञानिक लाइवनिट्जने भी इस सिद्धान्तका आविष्कार किया था। इसलिए निउटनके इस सिद्धान्तके प्रकाशित होने पर यह विवाद उठा कि किसने दूसरेसे पहले आविष्कार किया है। यदि वे इस आविष्कारको यथा समय प्रकाशित कर देते तो लाइवनिट्ज का दावा न हो पाता। फलत जिस समय यह आविष्कार प्रकाशित हुआ था उसी समय जर्मनीमें भी वह लाइवनिट्ज द्वारा प्रकाशित हुआ था। और जब प्रिंसिपियाकी रचनाके बहुत पीछे वह हेल द्वारा प्रकाशित हुआ तब भी हुक नामके और एक अगरेज वैज्ञानिकने उसके आविष्कारका भाग लेनेका दावा किया। असल बात यह है कि विश्वाकर्पणके सम्बन्ध में निउटनका सिद्धान्त यथासमय प्रकाशित न होने से हुक, रेन, हेल प्रभृति और और वैज्ञानिकोंने भी इस सम्बन्ध में स्वतन्त्ररूप से आलोचना की थी। वैज्ञानिक जगत्में अनेक समकालीन आविष्कार देखे जाते हैं। इन सब अनिच्छित तर्क वितर्कोंसे चिरशान्तिप्रिय निउटनको बडी मर्मपीडा होती थी। उन्होंने एक वक्त कहा था—"विज्ञान की अधिष्ठात्री देवीको मुकदमोंसे ऐसी मुहब्बत है कि

उनके अनुचरोंको उनकी सेवा करनेसे खूब कानूनदा भ
होना पडेगा।" और एक वक्त उन्होंने लाइबनिट्जको
लिखा था—"अपने आलोक सम्बन्धी सिन्तान्तके तर्क वित-
से ऐसा दु खित हुआ हूँ कि एक छाया के पीछे पीछे दौड
कर मैं अपने जीवनकी सुखशान्ति खो बैठा हू।"

निउटनका शेष जीवन स्वच्छन्दतापूर्वक ही बीता।
टकसाल के अध्यक्षपद पर नियुक्त हो बारह सौ पाउण्ड
वार्षिक पाने लगे। उन की वैज्ञानिक प्रतिभाका यूरोपमें
सर्वत्र सम्मान हुआ था। साम्राज्ञी एन ने सन् १७०५ में
उनको नाइटकी उपाधिसे अलङ्कृत किया। उन्होंने विवाह
नहीं किया। शायद विवाह करनेकी कल्पना भी उनके
मनमें पैदा न हुई। उनकी एक भाजी और उसके स्वामी
उनकी गृहस्थीकी देखभाल करते थे। उनका धर्मपर विश्वास
था और धर्मशास्त्र की आलोचना भी करते थे। सन् १७२७
की १० मार्च को ८५ वर्ष की अवस्था में उनकी मृत्यु हुई।
वेस्ट मिनिस्टर एवी में बडे समारोहके साथ उनको समाधि
दी गई और छ सम्भ्रान्त व्यक्तियोंने उनका शव उठाया।
गेलिलिओका शोचनीय परिणाम और उनके प्रति इटली
निवासियोंकी अकृतज्ञताकी बात सोचनेसे मन जैसा
दु खित हो जाता है वैसा ही निउटन के प्रति इङ्गलैण्ड
निवासियोंके इस प्रकारके सम्मान-प्रदर्शनसे आनन्दित
होता है।

निउटनके आविष्कारोंकी वार्त्ता पूरी पढनेसे स्वत
ही आश्चर्य पैदा होता है कि किस तरह एक व्यक्ति इतने
आविष्कार कर सका था। अध्ययनकालमें ही उन्होंने

द्विपद सिद्धान्त (binomial theory) और शून्य वृद्धि सिद्धान्त (theory of fluxions) का आविष्कार और श्वेत आलोक का विश्लेषण किया था। इनके अतिरिक्त दिशा देखनेके यन्त्रकी उन्नति करना, पदांशयन्त्रकी रचना, आलोक-सिद्धान्त, रंग सम्बन्धी सिद्धान्त, शब्दकी गतिका निर्णय आदि बहुत से आविष्कार अकेले उन्होंने ही किये थे। ये आविष्कार यदि दो वैज्ञानिक मिल कर करते तो उनमेंसे प्रत्येक ही विख्यात वैज्ञानिक कहा जाता। किन्तु सर्वोपरि जब यह देखते हैं कि इन सबके सिवा वे विश्वाकर्षण का आविष्कार कर ब्रह्माके गूढ़ रहस्यका पर्दा खोल गये हैं, अनन्त ज्योतियोंका व्योममें अत्यद्भुत भ्रमण वृत्तान्तयुक्त गूढ़ तत्त्व प्रकाशित कर गये हैं और उसी के साथ ज्योतिष-शास्त्र को एक नये सूत्रमें गूंथ गये हैं, तब उनके अतिमानुषिक मानसिक शक्ति की प्रखरताका विचारकर विस्मित हो जाते हैं। एक विस्मित फरासी वैज्ञानिक इस प्रकार कह गया है—"निउटन क्या हम लोगोंकी तरह मनुष्यके समान खान-पान करते और सोते थे? मुझे तो वे देवता मालूम होते हैं—मानो इस जगत् के बन्धनों से बाहर थे।" और महापुरुष निउटन कह गये हैं—मैंने ज्ञानसमुद्रके तीरपर बैठकर केवल कंकड़ पत्थर बटोरे हैं, अनन्त ज्ञानसमुद्र मेरे आगे अनाविष्कृत पड़ा है।" जो उनकी "महतो महीयान" जगत् सृष्टि के अनन्तरहस्य के भीतर खूब गहरे पैठ चुके हैं उनके ही उपयुक्त यह उक्ति है।

छठवां परिच्छेद।

नागार्जुन।

जैसे नवीन रसायनके जन्मदाता फरासीसी रासायनिक लेवोसिये हैं उसी प्रकार भारतीय प्राचीन रसायनके जन्मदाता यदि कोई कहा जा सकता है तो वे नागार्जुन हैं। निसन्देह भारतीय रसायनके जन्मदाता नागार्जुन हैं। बहुतसे तान्त्रिक ग्रन्थोंमें नागार्जुन तीर्यक्पातन-प्रक्रिया (Distillation) और धातुकी जारण-मारणप्रक्रियाके आविष्कर्ता कहे गये हैं। यहाँ कई एक प्रमाण दिये जाते हैं। चक्रपाणिने लोहमारणकी प्रक्रियाका वर्णन करते वक्त स्वीकार किया है कि यह प्रक्रिया नागार्जुन द्वारा प्रवर्त्तित हुई है। चक्रपाणिने "नागार्जुन वर्त्ति" का वर्णन करते वक्त लिखा है—"नागार्जुनेन लिखिता स्तंभे पाटलिपुत्रे," इस वर्त्तिका एक उपादान मारा हुआ ताँबा है। रसेन्द्र चिन्तामणि नागार्जुनको तिर्य्यक्पातन प्रक्रियाका आविष्कर्ता स्वीकार कर गये हैं—"तिर्य्यक्पातनमित्युक्त सिद्धनागार्जुनादिभि।" चक्रपाणि लोहमारण नागार्जुनका आविष्कार कह गये हैं। "नागार्जुने मुनीन्द्र शशास चल्लौहशास्त्रमतिगहनम्।" नित्यनाथ विरचित रसरत्नाकर नामक रसग्रन्थ में, "व्यधितान हितार्थाय प्रोक्त नागार्जुनेनयत्" श्लोकमें नागार्जुनको रसविषयक उपदेष्टा स्वीकार कर गये हैं। इनके अतिरिक्त रसार्णव, रसरत्नसमुच्चय, रसराजलक्ष्मी, रसकल्पद्रुमाकर प्रभृति यावतीय तान्त्रिक ग्रन्थों में नागार्जुन एक प्रधान उपदेष्टा

माने गये हैं। नागार्जुन रसरत्नाकर, आरोग्यमजरी, रसेन्
मगल आदि ग्रन्थोंके रचयिता कहे जाते हैं।

नागार्जुनका आविर्भाव काल ।

बहुलोका कहना है नागार्जुन और बौद्धधर्मके प्रवर्त्तयि
सिद्धनागार्जुन एक ही व्यक्ति हैं। सुश्रुतके टीकाक
डल्वनाचार्यके मतानुसार नागार्जुन सुश्रुतके प्रतिसंस्क
हैं। महायानप्रवर्तक नागार्जुन रासायनिक और चिकित्स
पारदर्शी थे, इस विषय के अनेक प्रमाण बौद्ध, पाली, तिब्बती
और चीनी भाषामें लिखित नाना ग्रन्थोंसे संग्रहीत कि
गये हैं। चीनके विख्यात पर्य्यटक हुयनसग सातवीं स
में भारत घूमने आये थे। वे भारतमें आ नागार्जुनको प्रसि
बौद्ध और रासायनिक सुन गये थे। तिब्बतके सुप्रसिद्ध लाम
तारानाथ अपने बौद्धधर्मके इतिहासमें नागार्जुनकी चिकित्
शास्त्र विषयक पारदर्शिताके सम्बन्धमें अतिमानुषिक किम
दन्तिया संग्रह कर गये हैं। वास्तविक बहुमहायान बौद
धर्म ग्रन्थोंमें नागार्जुन एक ही समय धर्म प्रवर्त्तक औ
रासायनिक कहे गये हैं।

नागार्जुनके आविर्भाव कालके विषयमें बहुत मतभेद है
जिन सब प्रमाणोंके द्वारा उनके आविर्भाव कालका निरूप
किया जा सकता है वे नीचे दिये जाते हैं।

पहला—चीन पर्यटक हुयनसग नागार्जुनको राजा शा
वाहनका बन्धु लिख गये हैं।

दूसरा—पाँचवी सदीमें नागार्जुनकी जीवनीका अनुवा
चीनी भाषामें हुआ था।

प्रभृतिके ग्रन्थोंसे सग्रहीत 'नागार्जुनकी 'जीवनी संग्रह' नामक पुस्तकसे यह किम्वदन्ती नीचे दी जाती हे ।

विदर्भ नगरके एक धनी ब्राह्मणके वहुत समयतक कोई सन्तान न हुई। एक रातको उसने यह स्वप्न देखा कि सौ ब्राह्मणोंका भोजन करानेसे उसके एक पुत्र पैदा होगा। पुत्रके जन्म लेने पर (यह पुत्र ही नागार्जुन थे) ज्योतिषियोंने कहा कि यदि पुत्रके पिता-माता सौ ब्राह्मणोंको भोजन करायें तो पुत्र सात वर्षतक जी सकता हे। इसके वाद उसकी आयु नहीं। सात साल जव वीत गये तव पिता-माता दु खसे पुत्र को एक निर्जन स्थान में रख आये। वहाँसे नागार्जुनके नलेन्द्रविहार चले जानेपर विहारके अध्यक्ष श्रीसरहभद्रने नागार्जुनको भिक्षुकपदपर दीक्षित किया। कुछ समयके वाद देशमें दुर्भिक्ष पडनेपर रुपया कमाने की इच्छाके कारण अन्य भिक्षुकगणोंकी सलाहसे नागार्जुनने दूसरी धातुओंका सोना वना लेनेकी युक्तिया सीखने के लिए महासमुद्रके मध्यवाले एक द्वीपमें रहनेवाले एक साधुके पास जाने की इच्छा की। वे विद्यावलसे एक सम्मोहित वृक्षके दो पत्ते एकत्रकर और उनपर चढकर उस द्वीपमें जा पहुँचे। नागार्जुन सोना वनानेकी प्रक्रिया सीखकर नलेन्द्रविहारको लौट आये और वहुतसा सोना वनाकर उसकी आयसे सव भिक्षुकोंका पालन-पोषण करने लगे अनन्तर उन्होने योग सीखकर सिद्धि प्राप्त की थी। नागार्जुन ने अनेक चैत्य विहारोंकी स्थापना की थी और विज्ञान, चिकित्सा, ज्योतिष और रसायनशास्त्र सम्वन्धी अनेक ग्रन्थ लिखे थे। श्रीसरहभद्रकी मृत्युके वाद नागार्जुन नलेन्द्रविहारके

अध्यक्ष बनायेगये। उन्होने बड़ी दक्षतासे विहारका काम चलाया। उनके गुरु श्रीसरहभद्रने माध्यमिक दर्शन मात्र का बीज बो दिया था, उन्होंने उसी दर्शन को अच्छी मजबूत बुनियाद देकर स्थापित किया।"

उपर्युक्त तथा अनान्य किम्वदन्तियों से मालूम होता है कि नागार्जुन ब्राह्मण पुत्र थे, अनन्तर उन्होने बोद्धधर्म की दीक्षा ली। श्रीसरहभद्र उनके गुरु थे और उनकी मृत्युके बाद नागार्जुन नलेन्द्रविहारके अध्यक्ष हुए। उन्होने ही माध्यमिक दर्शन की प्रतिष्ठा की और रसायन चिकित्सा प्रभृति शास्त्रों के ग्रन्थ निर्माण कर गये।

नागार्जुन सुश्रुतके प्रतिसंस्कर्त्ता थे।

सुश्रुतके टीकाकर डल्वनाचार्यके मतानुसार नागार्जुन प्राचीन सुश्रुतके प्रतिसंस्कर्त्ता और सुश्रुतके उत्तरतन्त्रके रचयिता हैं। इस उत्तरतन्त्रमें बहुतसी व्याधियो और शारीरिक चिकित्साका वर्णन है। सुश्रुतके अन्यान्य स्थानोमें विशेष रीतिसे अस्त्रचिकित्साका ही वर्णन है, शारीरिक चिकित्साका वर्णन बहुत ही सामान्य है।

तिर्य्यक्पातनका (Distillation) आविष्कार।

रसेन्द्र चिन्तामणि आदि ग्रन्थो के मतानुसार नागार्जुन तिर्य्यक्पातन प्रक्रियाके आविष्कर्ता हैं। प्राचीन कालमें तिर्य्यक्पातन प्रक्रियाका आविष्कार प्रधानत मदिरा और पारा शुद्ध करनेके लिए हुआ होगा। रसेन्द्रचिन्तामणिमें नागार्जुन प्रभृतिकी प्रवर्त्तित तिर्य्यक्पातन प्रक्रिया इस प्रकार

वर्णित है,—दो कलसियोंमें से एकमें पारा और दूसरीमें पानी भरकर तिर्यक् भावसे दोनोको रखना चाहिए और दोनोका मुँह एकत्रकर मुँह बन्द कर देना चाहिए। इसके बाद पारेवाली कलसीमें तबतक ताप देना चाहिए जबतक पारा पानीवाली कलसीमें न चला जाय। * यह प्रक्रिया आज कलकी तिर्य्यक्पातन प्रणालीका पूर्वाभास है। पानीवाली कलसी condenser का काम करती है। पानी को गिराकर पानीवाली कलसीके बदले खाली कलसी काममें लाना चाहिए और कलसीके ऊपर बाहरी हिस्सेमें पानी गिराकर उसे शीतल रखना चाहिए।

धातुके जारण-मारणका आविष्कार

बहुविध तान्त्रिक ग्रथोंमें नागार्जुन लोहा आदि धातुओंके जारण-मारण प्रक्रियाके आविष्कारक कहे गये हैं। इसी धातुमारणकी प्रक्रिया तथा अल्पमूल्यवाली धातुको सुवर्णमें रूपान्तरित करनेकी प्रक्रियाके आविष्कारसे ही रसायन शास्त्र की उत्पत्ति हुई है। इन दोनो प्रक्रियाओंके आविष्कारक होनेसे भारतमें रसायन शास्त्र की प्रतिष्ठा करने का श्रेय नागर्जुनको है।

धातुओंकी मारण प्रक्रियाका प्रथम उल्लेख हम सुश्रुत के उत्तर तन्त्रमें देखते हैं। हम आगे लिखही आये हैं कि

* घटे रस विनिक्षिप्य सजल घट मन्यकम्।
तिर्य्यङ्मुख द्वय कृत्वा तन्मुख रोधयेत् सुधी ॥
रसार्धो ज्वालयेदग्नि यावत् सूतो जल विशेत्।
तिर्य्यक् पातनमित्युक्त सिद्धे नागार्जुनादिभि ॥

रसेन्द्रचिन्तामणि

डल्हनाचार्यके मतानुसार सुश्रुतके [illegible]
नागार्जुन हैं। यदि नागार्जुनने उत्तरतंत्र [illegible]
रत्नमें वर्णित धातुकी अयस्कृतिविधि [illegible]
धातुमारणकी प्रक्रियाका प्रथम परिच्छेद है। [illegible]
अयस्कृतिविधि धातुका यौगिक (com p[illegible]
की प्रक्रियाकी पहली चेष्टा है। सुश्रुतने [illegible]
धातुओंकी अयस्कृति प्रक्रिया इस प्रकार [illegible]
के बहुत पतले पत्ते बनाकर उसपर [illegible]
चाहिए। इसके बाद उन पत्तोंको [illegible]
त्रिफला और सालसारादिके काढ़ेमें [illegible]
इस प्रकार सोलह बार जलाने और [illegible]
खैरकी लकड़ीसे जलाना चाहिए।

ठढा होनेपर उस लोहेका चूर्ण [illegible]
से उसे छान लेना चहिए। लोहेके इस [illegible]
मिला उपयुक्त मात्रासे खिलाना चाहिए [illegible]
सीसा, चादी, सोना आदि धातुओं [illegible]
किया जा सकता है।" इसी प्रकार [illegible]
क्लोराइड और आक्सिक्लोराइड तैयार [illegible]

चक्रपाणिने नागार्जुनकी लौहमारण [illegible]
पूर्वक लिखी है। निबन्ध बहुत बढ़ जाने [illegible]
यहाँ नहीं दिया जाता। स्थूलत लोहेको [illegible]
ओषधोंके रसकी भावना दे फिर [illegible]
ताप देनेसे लोहा मर जाता है। यह [illegible]
पुटपाकविधि आदि प्रक्रियाओं में [illegible]

प्रक्रियाओंका वर्णन करते समय चक्रपाणिने दो जगह नागार्जुनका नाम लिया है, जैसे—"नागार्जुनो मुनीन्द्र: शशास यल्लौहशास्त्रमतिगहनम्" "लौहस्य पाकमधुना नागार्जुनाशिष्टमभिदध्म। लोहा मारनेकी नागार्जुनकी यह विधि रसेन्द्र चिन्तामणिमें प्रारम्भसे और रसेन्द्रसार आदि ग्रन्थों में आंशिक रूप से दी गई है।

हीनधातुको सुवर्णमें रूपान्तरित करनेकी प्रक्रिया।

आगे दीगई तिब्बती किम्वदन्तीसे मालूम हो सकता है कि नागार्जुनको हीन धातुका सोना बना लेनेकी प्रक्रिया मालूम थी। सातवीं सदीमें हुएनसंग जब भारतमें आये थे तब वे सुन गये थे कि नागार्जुनको ऐसी ओषध मालूम थी जिससे वे सब धातुओं और पत्थरको सोना बना सकते थे। डाक्टर प्रफुल्लचन्द्र रायको रसरत्नाकर नामक एक तान्त्रिक बौद्ध-ग्रन्थका जो नागार्जुन लिखित कहा जाता है, कुछ अंश मिला है। उन्होंने स्वयं ही स्वीकार किया है कि वह सातवीं या आठवीं सदी में लिखा गया है। इस ग्रन्थमें नागार्जुनकी हीन धातुको सुवर्णमें रूपान्तरित करनेकी कई युक्तिया दीगई हैं। इन सब युक्तियोंका आविष्कार नागार्जुनने किया था या किसी दूसरेने इसका निर्णय करना कठिन है। नागार्जुनके समयमें फिर भी इस प्रकारकी युक्तियो का प्रचलित रहना सम्भव है। कौतूहली पाठकोंकी जानकारीके लिए यहा कई एक युक्तियाँ दी जाती है।

(१) "राजवर्तकको शिरीषपुष्पकी भावना देनेसे एक रत्ती चॉदी और सौ रत्ती सोना उगते हुए सूर्यकी तरह बन-जायगा, इसमें विचित्रता क्या ?"

(२) 'गधकको पलाशके रससे शुद्धकर चादीके साथ तीनवार कडेकी आगसे पुटपाक देनेपर चॉदीसे सोना वन जाता है, इसमें विचित्रता क्या ?"

(३) "यदि रसकका (Calamine) तीनवार तॉवेके साथ पुटपाक किया जाय तो तॉवेका सोना वन जायगा, इसमें विचित्रता क्या ?"

(४) "भेडीके दूध और बहुतसे खट्टे रसोंकी भावना देनेसे दरद (Cinnabar) कुकुमसदृश सुवर्णमें परिणत हो जायगा, इसमें विचित्रता क्या ?"

अवश्य इन सब युक्तियोसे चॉदी या तॉवेसे सोना प्रथम न बनेगा, इन युक्तियोसे मिश्रधातु (alloy) या सोनेके सदृश एक खास रगकी चीज बन जायगी । इन सब युक्तियोसे पाठकों को याद रखना चाहिए—" All is not gold that glitters "

---

(१) किमत्र चित्रं यदि राजवर्त्तकम् ।
शिरीषपुष्पाग्ररसेन भावितम् ॥
सितं सुवर्णं तरुणार्कसन्निभं ।
करोति गुजाशतमेक गुजया ॥

(२) किमत्र चित्रं यदि पीतगन्धकं
पलाशनिर्यासरसेन शोधितं

कज्जली या रसपर्पटी

प्रसिद्ध पूर्वोक्त रसरत्नाकरमें, जो नागार्जुनका लिखा कहा जाता है, हम पारेका आभ्यन्तरिक प्रयोग पहले पाते हैं। पहले ही लिखा जा चुका है कि यह ग्रन्थ सातवीं सदीमें लिखा गया है। इस ग्रन्थमें पारे और गन्धकको मिलाकर कज्जली या रसपर्पटी बनानेकी व्यवस्था है,* और सोने, गन्धक और पारेको मिलाकर लघुपुट से पचाकर स्वर्णसिन्दूर बनाने की व्यवस्था देखी जाती है। यह शेषोक्त साधकेन्द्र खानेसे दिव्य देह हो जाती है।

आरण्यकैरुत्पलकैस्तु पाचित।
करोति तार त्रिपुटेन काचनम्॥
(३) किमत्र चित्र रसको रसेन।
क्रमेण कृत्वाम्बुधरेण रंजित।
करोति शुल्व त्रिपुटेन काञ्चनम्॥
(४) किमत्र चित्र दरद सुभावित॥
पयेन मेप्यावहुशोऽम्लवर्गं।
सित सुवर्णं बहुधर्मभावित॥
करोति साक्षाद्ध रकुङ्कुमप्रभम्।
नागार्जुन विरचित रसरत्नाकर

*सूतकस्य पल गृह्य तुल्यांश साकुक विषम्।
तत्स गन्धक शुद्ध चूर्णं कृत्वम विनिक्षिपेत्॥
कृत्वा कज्जलिकामादौ पल दत्वा च गन्धकम्।
घृतपक्वञ्च तच्चूर्णं पचेदायस भाजने॥
यावद्द्रवत्वमायाति तत्क्षणात् त विनिक्षिपेत्।
पुटे वा कदलीपत्रे सिद्ध पर्पटिका रसम्॥

यदि रसरत्नाकर नागार्जुन रचित न भी हो तोभी सातवीं सदीका तान्त्रिकग्रन्थ होनेसे हम लोग कह सकते हैं कि सातवीं सदीमें कज्जली, रसपर्पटिका, और स्वर्णसिन्दूरका आविष्कार हुआ था और वे औषधरूपमें खिलाये जाते थे। रसरत्नाकरके बाद वृन्दके सिद्धयोगमें एक हिस्सा गन्धक और आधा हिस्सा पारा मिलाकर रसामृत चूर्ण बनानेकी विधि है। वृन्द चक्रपाणि के पहले हुए थे, किन्तु अध्यापक राय महाशय ने लिखा है कि सिद्धयोगके एक संस्करणमें रसामृत-चूर्णका उल्लेख नहीं मिला, केवल काश्मीरसे लाई गई हस्त लिखित प्रतिमें मिला है। वृन्दके बाद चक्रपाणिने एक हिस्सा पारा और एक हिस्सा गंधक मिलाकर कज्जली बनाई है और उसको गलाकर रसपर्पटी तैयार की है। यही प्रस्तुत प्रणाली रसरत्नाकरमें उल्लिखित प्रस्तुत प्रणालीसे मिलती है। किन्तु चक्रपाणिने लिखा है—"रसपर्पटिका ख्याता निबद्धा चक्र-पाणिना।" हम चक्रपाणिको कज्जली और रसपर्पटिकाका आविष्कर्ता न कहकर यह कह सकते हैं कि उन्होंने वैद्यक शास्त्रमें उसे सन्निविष्ट किया है।

इसके अतिरिक्त इसी रसरत्नाकरमें विविध खनिज (ores) पदार्थोंसे धातु तैयार करनेकी विधियां और पच्चीस प्रकारके यन्त्रोंका उल्लेख है। धातु तैयार करनेकी विधियोंका नागार्जुनके समयमें प्रचलित रहना ही सम्भव है, किन्तु मालूम होता है यन्त्रोंका प्रचार नागार्जुनके पीछे हुआ था। फलत-नागार्जुन लिखित अन्य ग्रन्थोंकी समालोचना न होने से उनके वैज्ञानिक कार्योंका ठीक विवरण देना असम्भव है। किन्तु यह ठीक समझ पड़ता है कि नागार्जुन धातुकी मारण-युक्तियों

और हीनधातु का सोना बनानेकी युक्तियोंको उद्भावित और प्रचलित कर भारतमें प्राचीन रसायनशास्त्रकी नींव डाल गये थे। उनके बादसे विविध धातुओंके विविध यौगिक निकाले गये और ओषधके काम आये तथा विविध यन्त्रोंका भी आविष्कार हुआ। वे भारतीय रसायनशास्त्र के युगप्रवर्त्तक थे। इन महापुरुषके वैज्ञानिककार्योंका सम्यक् तथ्य जाननेके लिए चेष्टा करनेके निमिन्त विद्वानों के निकट विनीत प्रार्थना है। गेबार, पेरासेल्सस, एविसेना, एट्टीकेला आदि हमारे परिचित हैं किन्तु नागार्जुन, चक्रपाणि आदि भारतके प्राचीन रासायनिक हमारे अपरिचित हैं—यह जातीय कलङ्क कब दूर होगा?

सातवाँ परिच्छेद

आर्यभट्ट

प्राचीन भारत अङ्कशास्त्र में, अनेक अशोंमें, जगतका गुरु था—यह बात अब निर्विवाद रूपसे स्वीकार की जा चुकी है। दशमलवका आविष्कार सर्वसम्मति से भारतमें ही हुआ था। संख्या लिखने की पद्धतिका आविष्कार भी भारतीय है। यहाँ १, २, ३ प्रभृति संख्यायें अरबवालोंके ग्रहण करने पर क्रमशः यूरोपमें ग्रहण की गई। प्राचीन भारत प्राचीन ग्रीस देशका ज्योतिषशास्त्रका गुरु होनेका गौरव कर सकता है। आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त, वराहमिहिर तथा भास्कराचार्यकी अंकशास्त्र और ज्योतिषके विषयकी गवेषणायें केवल भारत के ही क्यों, जगत्के गौरवकी सामग्री हैं। इन कई महापुरुषों के अग्रगण्य आर्यभट्टके विषयकी इस प्रबन्ध में संक्षिप्त समालोचना करनेकी इच्छा है।

आर्यभट्ट या आर्यभटके जीवन सम्बन्धी बातें बहुत ही कम मालूम हुई है। उनके ग्रन्थके पढने से मालूम होता है कि उन्होंने ३५७७ कल्यब्द अथवा ३९८ शक (४७६ ईसवी) में जन्मग्रहण किया था और २३ वर्षकी अवस्थामें अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'आर्यभटीय' या 'आर्यभट्ट तन्त्र की रचना की थी। ग्रीस वाले उनको अन्दुवेरियस या अर्डुवेरियस और अरबवाले अर्जबर कहते थे। कुसुमपुर या पाटलीपुत्र (आजकल का पटना) उनका वासस्थान था और यहीं उन्होंने 'आर्यभटीय' की रचना की थी।

आर्यभटीय

'आर्यभटीय' के पहले ज्योतिषशास्त्र बहुत ही अनिश्चित था। इस कारण आर्यभट्ट एक हिसावसे भारतीय ज्योतिष के प्रतिष्ठाता कहे जा सकते हैं। उनके पहलेके, ब्रह्मसिद्धान्त सूर्यसिद्धान्त, व्यास-सिद्धान्त प्रभृति सिद्धान्त देखे जाते हैं किन्तु बहुतसे सिद्धान्त लुप्त हो गये हैं। कोई कोई सिद्धान्त समयान्तर में परिवर्त्तित हो अवतक विद्यमान हैं। इनमेंसे ब्रह्मसिद्धान्त सबसे प्राचीन है। आर्यभट्टने लिखा है कि इस ब्रह्मसिद्धान्तके आधारपर उन्होंने अपना ग्रन्थ लिखा है। इससे अच्छी तरह मालूम होता है कि उन्होंने प्राचीन ग्रीक लोगोंसे कोई विषय ग्रहण न किया था। उनके अभिमत भारतीय थे, उनमें ग्रीकलोगोंका संश्रव नहीं। यह ग्रन्थ चार भागों में विभक्त है—गीतिकापाद, गणितपाद, काल क्रियापाद और गोलपाद। गणितपादमें पाटीगणित और बाकी तीन भागों में ज्योतिष और गोलगणितकी आलोचना की गई है*।

पृथिवी गोली और निरावलम्ब है।

पृथिवीके आकारका स्वरूप निर्णय करनेकी आकांक्षा स्वभावसे ही, मनुष्यके मनको उत्साहित करती है। सर्व साधारणकी दृष्टिमें पृथिवी समतल क्षेत्र है, किन्तु प्राचीन कालसे हिन्दू उसे गोली मान रहे हैं। ऋग्वेदके, किसी किसी सूक्तमें पृथिवीके गोलत्वका आभास पाया जाता है। पृथिवी

---

* क्राइस्टसे दो तीन हज़ार वर्ष पहलेके भारतीय ज्योतिषका ज्ञान प्राप्त करने के लिए Brennand's Hindu astronomy देखिये।

के निरावलम्ब स्थित होनेकी सूचना भी ऋग्वेदमें मिलती है। आर्यभट्टने अवश्यही पृथिवीका गोलापन और निराधार स्थित होना स्वीकार किया है। पृथिवीका निराधार स्थित होना स्वीकार करनेसे स्वत ही प्रश्न उठता है कि यदि वास्तवमें ही पृथिवी निरावलम्ब है, तो वृक्षलता, जीवजन्तु, पर्वतादि पृथिवीपर कैसे खडे हैं। इसका उत्तर आर्यभट्टने यह दिया है कि कदम्बके गोले फलके ऊपर की ग्रन्थियां जैसे फलपर अवस्थित हैं, उसी प्रकार पृथिवी के गोले पर जलज, स्थलज पदार्थ अवस्थित हैं।* वराह, भास्कर प्रभृति आर्यभट्टके बादके सब ज्योतिषियोंनेही पृथिवीका गोलापन और निरावलम्बमें अवस्थित होना स्वीकार किया है। यहप्रश्न हो सकता है कि यदि पृथिवी निराधार है तो लुढक क्यों नहीं पडती? इसका सुन्दर उत्तर भास्कराचार्य दे गये हैं—"पृथिवी के चारों ओर आकाश (शून्य) है वह लुढक भी पडे तो कहाँ?

पृथिवीके घूमनेका आविष्कार

भारतमें आर्यभट्ट पृथिवीके घूमनेके आविष्कारक प्रसिद्ध हैं। कोई कोई कहते हैं कि वेदमें भी पृथिवीके घूमनेका हवाला दिया गया है, किन्तु वैज्ञानिक दृष्टिसे आर्यभट्ट ही उसके आविष्कारक माने गये हैं। आर्यभट्टके बादके ज्योतिषियों मेंसे किसीने भी पृथिवीका घूमना स्वीकार नहीं किया है। अतएव इस तरह मालूम होता है कि भारतवर्षमें आर्यभट्ट ही पृथिवीके घूमनेके सिद्धान्तके एकमात्र आविष्कारक और

*यद्वत् कदम्बपुष्पग्रन्थि प्रचित समन्तत कुसुमै।
तद्वद्धि सर्वसत्वजलजै स्थलजैश्च भूगोल॥

परिपोषक थे। ग्रीस देशमें पृथिवीके घूमनेका सिद्धान्त बहुत प्राचीन कालमें एकवार आविष्कृत हुआ था, किन्तु किसीके स्वीकार न करनेसे वह विलुप्त हो गया। सुप्रसिद्ध दार्शनिक पिथगोरस (क्राइस्टसे पाँच शताब्दी पहले) का कहना था कि पृथिवी अचल नहीं है, वह चलती है। किन्तु उसको यह मालूम न था कि वह सूर्यके चारों ओर घूमती है। उसके बाद एरिस्टारकस (क्राइस्ट से तीसरी सदी पूर्व) ने यह आविष्कार किया कि पृथिवी एक वर्षमें सूर्यकी परिक्रमा करती है और अपने अक्षपर ही घूमती है, इसीसे दिन और रात होते हैं। उनका यह सिद्धान्त सभीने स्वीकार किया और एरिस्टारकसके जन्मके प्राय अट्ठारह सौ वर्ष बाद सुप्रसिद्ध ज्योतिषी कोपार्निकासने पृथिवी और अन्य ग्रहोंके सूर्यके चारो ओर घूमनेके विषय का प्रचार पुन. किया। आर्यभट्टके समयमें, ग्रीसदेशमें पृथिवीके घूमनेका सिद्धान्त एकवारगी लुप्त हो गया था। इसी कारण हम लोग आर्यभट्ट को पृथिवीके घूमनेके सिद्धान्तका मौलिक आविष्कारक अनायास ही मान सकते हैं। आर्यभट्ट कहते हैं—

"चला पृथिवी स्थिरा भाति" अर्थात् पृथिवी स्थिर मालूम होनेपर भी चलती है। वे और भी कहते हैं कि पृथिवीके पूर्वकी ओर १५८२२३१५०० बार घूम आनेसे (अथवा इतने दिनमें) एक चतुर्युग वा ४३२०००० सौर वर्ष होते हैं। इससे अच्छी तरह समझ पडता है कि आर्यभट्ट जानते थे कि पृथिवीके एकवार अपने अक्षपर घूमनेसे एक दिनमान होता है और चतुर्युगमें पृथिवी इतने बार अपने अक्षके ऊपर घूमती है। उपर्युक्त गणनासे यह अनुमित नहीं होता कि पृथिवी सूर्यके चारों

ओर घूमती हे। अनन्तर लल्ल, ब्रह्मगुप्त प्रभृति पीछेके ज्योतिषियों ने आर्यभट्टके मतका खण्डनकर अपने अक्षपर पृथिवीके घूमनेका उल्लेख किया है, सूर्यके चारों ओर पृथिवीके घूमने का उल्लेख नहीं किया है। इससे जाना जाता हे कि पिथगोरस की तरह आर्यभट्ट अक्षके ऊपर पृथिवीके घूमनेकी बात जानते थे, सूर्यके चारों ओर घूमने की बात जानते न थे।

एक स्थलपर आर्यभट्टने इस पृथिवीके परिभ्रमणकी बात बहुत ही अच्छे उदाहरण द्वारा समझाई हे। उन्होंने कहा है—जिस तरह चलती हुई नॉवपर चढ़े हुए व्यक्ति तीर के अचल वृक्षोंको पीछेकी ओर जाते हुए देखते हैं, उसी तरह लङ्कासे (पृथिवी के चलने के कारण) स्थिर नक्षत्र पश्चिम की ओर जाते हुए दिखाई देते हैं।" *नक्षत्रोंकी पश्चिमकी ओर स्फुटगति (Apparent motion) देखते हैं, पर असलमें पृथिवी ही पूर्वकी ओर घूमती है और इसी परिभ्रमणके कारण नक्षत्रोंको पश्चिमकी ओर जाते हुए देखते हैं। आज-कल जैसे ग्रीनविच (Greenwich) का समय गणनामें व्यवहृत होता है, आर्यभट्ट लङ्काके समयका उसी प्रकार उपयोग करते थे।

और कई श्लोकों में आर्यभट्टने पृथिवीके परिभ्रमणका उल्लेख किया है, किन्तु विस्तार-भयके कारण हम उन्हें यहाँ नहीं देते। वादके जमानेमें लल्ल, श्रीपति, ब्रह्मगुप्त, वराह प्रभृति ज्योतिषियोने उनका मत उद्धृतकर उसके खण्डन करनेकी चेष्टा की है। लल्ल आर्यभट्टके शिष्य थे,

---

*अनुलोम गति नौस्थं पश्यत्यचलं विलोमगं यद्वत्।
अचलानि भानि तद्वत् समपश्चिमगानि लङ्कायाम्॥

किन्तु शिष्यने गुरुका सिद्धान्त नहीं माना। उन्होंने पृथिवी के परिभ्रमणके विरुद्ध अनेक आपत्तियां उठाई थीं। पाठकों को कौतूहल चरितार्थ करनेके लिए नीचे कुछ नमूने दिये जाते हैं—

(क) यदि पृथिवी ही घूमती है तो पक्षी अन्यत्र उड़ जाकर फिर अपने घोंसले को कैसे लौट आते हैं ?

(ख) पृथिवी यदि घूमती होती तो वाण ऊपर फेंकने पर वह अपने ही स्थानपर लौटकर न गिरता, कारण वाणके नीचे गिरने के समय के मध्यमें पृथिवी बहुत कुछ पूर्वकी ओर खिसक जायगी।

(ग) पृथिवी यदि घूमती होती तो लोग मेघों को पूर्व की ओर जाते कभी न देखते।

(घ) यदि यह मान लें कि पृथिवी धीरे धीरे घूमती है, तो आर्यभट्टके मतानुसार वह एक दिन में एकबार कैसे घूम जाती है।

श्रीपति, ब्रह्मगुप्त, वराह प्रभृति सभीने इस प्रकारकी आपत्तियाँ उठाकर पृथिवीके घूमनेके सिद्धान्तका खण्डन करनेकी चेष्टा की थी। यूरोपमें पन्द्रहवीं शताब्दीमें जब कोपार्निकासने पृथिवीके आवर्तनवादको पुन प्रचारित किया था तब भी इस प्रकारकी युक्तियों द्वारा उसका भी मत पहले अस्वीकृत हुआ था। सुप्रसिद्ध ज्योतिषी टाइकोब्राहि लल्लकी तरह यह नहीं समझ सका था कि ऊपर फेंकी हुई गेंद पश्चिमकी ओर गिरती क्यों नहीं दिखाई देती। पाठक समझ रहे हं कि एक बातसे इन सब प्रश्नोंकी मीमांसा हो

सकती है। पृथिवीके साथ वायुमण्डल भी घूमता है। आश्चर्य की बात है कि यह बात किसीके दिमागमें प्रविष्ट न हुई। यदि किसी के दिमागमें यह बात प्रविष्ट होती तो ये सब आपत्तियां पहले ही उठ न सकतीं। पाठक समझ सकते हैं कि पृथिवी के साथ वायुमण्डलके भी घूमनेसे लल्ल प्रमुख ज्योतिषियों की सब आपत्तियोंका खण्डन हो जाता है।

इस भूभ्रमणवाद के अतिरिक्त आर्यभट्ट ज्योतिष सम्बन्धी अनेक छोटे छोटे विषयोंपर मत दे गये हैं। नक्षत्रोंकी दीप्ति के विषय में लिख गये हैं कि गोली पृथिवी, ग्रह और नक्षत्र सूर्यके द्वारा प्रकाश पाते हैं। उनका जो अर्द्धांश सूर्यकी ओर रहता है, उसीको प्रकाश प्राप्त होता है, बाकीका अर्द्धांश अपनी छायासे अन्धकारमय रहता है। वैदिक ऋषियोंको भी यह मालूम था कि चन्द्र सूर्यके प्रकाशसे प्रकाशित होता है।

ग्रहोंकी कक्षा (Orbit) के सम्बन्धमें आर्यभट्ट लिख गये हैं कि शनि (Saturn) बृहस्पति (Jupiter), मंगल (Mars), सूर्य, शुक्र (Venus), बुध (Mercury), और चन्द्र की कक्षा उत्तरोत्तर अवस्थित है और सबके नीचे पृथिवीकी कक्षा है। इससे जाना जाता है कि आर्यभट्ट जानते थे कि सूर्यके चारों ओर पृथिवी और दूसरे ग्रह घूमते हैं।

मालूम होता है, कि आर्यभट्ट ग्रहणका प्रकृत कारण जानते थे। वराह आर्यभट्टके कुछ पीछे वर्तमान थे। वे ग्रहणका प्रकृत आधुनिक कारण विस्तार के साथ लिख गये हैं और उन्होंने ग्रहणके सम्बन्धकी पौराणिक कल्पनाका खडन किया है।

आर्यभट्ट केवल ज्योतिषी ही न थे, वे अङ्कशास्त्र जाननेवाले अच्छे पंडित भी थे। वे पाटीगणित, बीजगणित (Algebra)

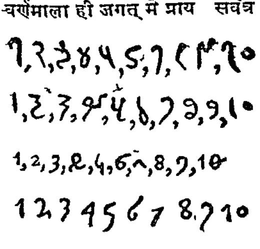
और त्रिकोणमिति (Trigonometry) के सम्बन्धमें अनेक मौलिक गवेषणायें प्रकाशित कर गये हैं।

संख्यानिर्देश

आर्यभट्टके समयमें, भारतमें, १, २, ३ प्रभृति संख्या-निर्देशक वर्ण आविष्कृत न हुए थे। सातवी शताब्दीमें, भारत में यह संख्यानिर्देशक वर्णमाला प्रचलित हुई। सम्भवत इसके पहले भी कई एक संख्यावाचक वर्ण भारतमें प्रचलित थे। अरबदेशके प्राचीन व्यासायियोने आठवी शताब्दीमें इस भारतीय संख्यानिर्देशक वर्णमाला का व्यवहार किया। पहले ही कहा जा चुका है कि आर्यभट्टके समयमें संख्यानिर्देशक वर्णमाला आविष्कृत न हुई थी। संख्यानिर्देशके लिए वे क, ख, ग प्रभृति वर्णोंका प्रयोग करते थे। इस वर्णमालाका प्रयोग करके भी वे सहज ही बडी बडी संख्यायें प्रकट कर सके थे। संख्यानिर्देशक वर्णमाला भारतसे यूरोपमें किस प्रकार गृहीत हुई, इसका यहाँ संक्षिप्त विवरण देना अप्रासंगिक न होगा।

अरबके अंकशास्त्रविशारदोंमें से सुप्रसिद्ध बेन मूसा (९०० ईसवी) ने सबसे पहले भारतीय संख्यानिर्देशक वर्णमालाका व्यवहार किया और क्रमश अरबके अन्य अन्य वैज्ञानिकोंने भी उसे ग्रहण किया। प्राचीन यूरोपमें, १, २, ३ प्रभृति रोमीय संख्यानिर्देशक वर्णमाला पहले व्यवहृत होती थी, किन्तु १००० शताब्दी में, रिम्स प्रदेशके आर्कविशप सुप्रसिद्ध फरासी धर्मयाजक गारवार्टने और उसके बाद रोमके सर्वप्रधान याजक पोप द्वितीय सिलवेस्टारने अरबवालोंसे हिन्दुओंकी

सख्यानिर्देशक वर्णमाला ग्रहणकर यूरोपमें प्रचलित की। १२०२ ईसवीमें पिसाके सुप्रसिद्ध लिओनार्डोने अपने ग्रन्थ में यह सख्यानिर्देशक वर्णमाला व्यवहृत की। अब भी यह वर्णमाला ही जगत् में प्राय सर्वत्र ही प्रचलित है। पहले की



रोमकी सख्यानिर्देशक वर्णमाला कहीं विशेष कार्यके लिए व्यवहृत होती है। रोम की वर्ण मालामें हिसाब करने या अक लिखनेकी अपेक्षा भारतीय वर्णमालामें अक लिखना सहज होने से वह सर्वत्र गृहीत हुई है। भारतीय सख्या निर्देशक वर्णमाला से सामान्य परिवर्तन होकर प्राचीन अरब और मध्यकालीन यूरोपकी वर्णमालायें गठित हुई है यह सख्या-निर्देशक वर्णमालाओं से प्रकट होगा* ।

बीजगणित (Algobra)

आर्यभट्ट प्राचीन भारतके प्रथम ऐतिहासिक बीजगणित-प्रणेता हैं। वे बीजगणित सम्बन्धी अनेक नये आविष्कार लिख गये हैं। प्राचीन यूरोपमें डाईओफेंटस बीजगणित के

---

* यह तालिका Balls History of Mathematics नामक ग्रन्थसे उद्धृत की गई है।

प्राचीन रचयिता प्रसिद्ध हैं। उनका आविर्भावकाल ठीक मालूम नहीं—सम्भवत. चौथी सदीमें वे वर्तमान थे। वे एलेक्जेंड्रियाके निवासी थे। और सम्भत ग्रीक न थे। उनका ग्रन्थ बहुत दिनोंसे विलुप्तप्राय हो गया है। प्राय ८६० ईसवीमें डाईओफेंटसके बीजगणितका अरबी भाषा में अनुवाद हुआ था। डाईओफेंटसका ग्रन्थ आर्यभट्टके समयमें और उनके बहुत काल पीछेतक भारत में अज्ञात था और इसी कारण हम लोग आर्यभट्टको बीजगणित के मौलिक आविष्कारक कह सकते हैं। कोलब्रुक प्रभृति प्रमुख पाश्चात्य पंडितोंने अरबके इतिहासमें आलोचना करके यह दिखाया है कि बगदादके अली मामून, हारुल अली रसीद, अली महमूद और अली मतादेद ये चार बादशाहोंके अमलमें लगातार १५० वर्षतक प्रचीन नानाविध संस्कृत ग्रन्थ अरबी भाषामें अनुवादित हुए थे। इसी समय आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त प्रभृति भारतीय ज्योतिषियोंके ग्रन्थ भी अरबी भाषा में अनुदित और पठित हुए थे। ७७३ ईसवीमें बादशाह अल मनसूरके समयमें भारतीय ज्योतिषी बादशाहके दरबारमें बुलाये गये। इस प्रकार आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त प्रभृति भारतीय ज्योतिषियोंके क्रमश बीजगणित सम्बन्धका ज्ञान भी अरब वालों तक पहुँचा। इसी कारण अरबवालोंका बीजगणित भारतीय बीजगणित का बहुत ऋणी है। ८०० ईसवीमें, अरबवालोंमें बेन मूसाने पहले पहल बीजगणित की रचना की। अरबके बीजगणितविशारदोंसे पिसाके लिईनार्डोने सन् १२०२ में बीजगणित सीखकर उसका बीज यूरोपमें बोया। उसी बीजसे पैदा हुआ वृक्ष क्रमश फूल फल उठा। जिस

प्रकार सख्यानिर्देशक वर्णमालाके लिए ससार भारतका ऋणी है, उसी प्रकार वीजगणितके सम्बन्धमें भी यूरोप अरबवाले वीजगणितवेत्ताओ को मध्यस्थवना ऋणी है।

यह पहले ही कहा जा चुका है कि ब्रह्मगुप्त, भास्कराचार्य प्रभृति भारतीय वीजगणितवेत्ताओंमेंसे आर्यभट्ट सबसे प्राचीन थे। वे सर्वसम्मत कुट्टक विधि (Algebric Analysis) के आविष्कर्त्ता थे। वे वर्णात्मक समीकरण (Quadratic Equation) जानते थे ओर—

$१+२+३+४+$

$१^२+२^२+३^२+४^२+$

$१^३+२^३+३^३+४^३+$

इन तीन श्रेणियो का योगफल दिया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने वीजगणितके ओर भी अनेक समीकरणोंका अकफल दिया है।

त्रिकोणमिति (Trigonometry)

त्रिकोणमिति के लिहाज से भी आर्यभट्ट प्राचीन भारतीय ज्योतियों के अग्रणी ओर प्रचीन ग्रन्थकार हैं। त्रिकोण-मितिमें वे अनेक कोणों के ज्या (Sine) की एक तालिका लिख गये है। उन्होंने द्विगुणित कोणके आधो पूर्णज्या (Semi chord of double the angle) को ज्या निर्दिष्ट किया है। प्रथम वृत्तपाद (first quadrant of a circle) के ३$\frac{३}{४}$ डिग्री वा उसके गुणितकोणकी ज्या निर्द्धारितकर उन्होंने यह तालिका तैयार की है। उन्होंने ९० डिग्री की ज्याको ३४३८ माना है। इसी गणनासे उन्होंने परिधि व्यास की सख्या निश्चय ही ३.१४१६ निकाली है नहीं

तो यह सख्या ठीक न होती। आधुनिक वैज्ञानिक यह सख्या ३·१४१५६ निर्णय करते हैं। उन्होंने परिश्रम कम पडने के लिए भूपरिधिकी गणना करते समय इस सख्या को $\sqrt{१०}$ वा ३ १६२२ पकड लिया है। किन्तु ठीक सख्या ३ १४१६ है, यह भी वे जानते थे, यह उपर्युक्त अङ्कोसे जाना जाता है। इसके सिवा त्रिकोणमितिके सम्बन्धमें और भी अनेकों हिसाब उन्होंने निकाले हैं। ज्यामिति (Geometry) के सम्बन्धके उनके अनेक *प्रमाणोंमें भूल है। असलमें ज्यामितिका ज्ञान प्राचीन ग्रीस* देशमें जैसा उन्नत था वैसा भारत में न था।

ब्रह्मगुप्त, वराहमिहिर और भास्कराचार्य प्रभृति प्राचीन भारतीय ज्योतिषी और अकशास्त्रविद् आर्यभट्ट के पीछे हुए हैं। उनके कर्ममय जीवनका परिचय देने की इच्छा है। इस प्रबन्धमें उनके अग्रणीके आविष्कारोंकी आलोचना करने का सुयोग पानेसे अपने को कृतार्थ समझता हूँ।

———

आठवाँ परिच्छेद।

डारविन।

चार्लस राबर्ट डारविनका जन्म सन् १८०६ की १२ वीं फरवरीको इङ्गलेण्डके अन्तर्गत स्रुवेरी नामक स्थानमें हुआ था। उनके पिताका नाम राबर्ट डारविन था। वे एक अच्छे चिकित्सक थे। डारविनकी माता डारविनको आठ वर्षका छोड़ कर मर गई। तबसे उनके लालन पालनका भार उनकी बड़ी बहनोंपर पड़ा। डारविनके पांच भाई बहनें थीं, डारविन उन सबसे छोटे थे। डारविन पिताको बहुत चाहते थे, उनकी बहुत भक्ति करते थे, और अनेक स्थानों में उनके सम्बन्धकी बहुत सी बातें लिख गये हैं। सन् १८१८ में वे स्रुवेरीके स्कूल भेजे गये। इस स्कूलके अध्यक्ष डाक्टर बाटलर थे, ये पीछे लिचफील्ड के बिशप हुए थे। डारविनके पिताकी इच्छा थी कि डारविन उनकी ही तरह चिकित्साशास्त्र पढ़ें। इसी कारण डारविन, सन् १८२५ में एडिनबरा कालेज भेजे गये। चिकित्साविज्ञान पहले उनको न रुचा। किन्तु यहाँ अपने अगले जीवनके कार्योंकी प्रथम सूचनाके आरम्भ करनेका सुयोग उन्हें मिला। अध्यापक डाक्टर ग्राण्टके साथ बन्धुत्व हो जानेसे डारविन उनके साथ समुद्रतीरके जीव-जन्तुओंका नमूना सग्रह करने जाते थे।

दो साल एडिनबरामें रहनेके बाद उन्होंने चिकित्सा-शास्त्र पढ़नेका सङ्कल्प छोड़ दिया। अनन्तर उनके लिए

धर्मयाजकका काम निश्चिन्त हुआ। इसलिए वे सन् १८ में विख्यात केम्ब्रिज विश्वविद्यालके अन्तर्गत क्राइ कालेजमें भर्ती हुए। यहां सुप्रसिद्ध अध्यापक हेंसल घनिष्ठ बन्धुत्व हो जानेसे उनके जीवनकी गति सम्पूर्ण रू दूसरी ओर परिचालित हो गई। अध्यापक हेंसलो प उद्भिद् विज्ञानके और पीछे खनिज विज्ञानके अध्यापक नि हुए। वे अच्छे विद्वान् थे, और छात्रोंसे खूब घनिष्ठता कर लेते थे। डारविन हेंसलोके यहाँ तक प्रियपात्र हुए, घूमने जाते वक्त भी हेंसलो उनको अपने साथ ले लेते इस कारण डारविनके सहपाठी उनको हेंसलोका सह कहकर उनकी हँसी उडाते थे। डारविनके मनमें प्रकृति विज्ञान पढनेकी इच्छा पैदा कर देनेके कारण अध्याप हेंसलोका सारा संसार विशेष ऋणी है। उनका सम्पर्क न होना तो डारविन डारविन हो सकते या नहीं, यह सन्दे की बात है। सन १८३१ में हेंसलोकी सलाहसे डारविन भूविद्या पढना आरम्भ किया और वे भूविद्या सीखने के उसी साल के अगस्त महीनेमें हेंसलो के साथ वेल्स गये।

समुद्र-यात्रा।

डारविनको शिकार खेलनेका बडा शौक था। एक शिकारसे लौटनेपर उनको अध्यापक हेंसलोका एक मिला। इस पत्रमें अध्यापक हेंसलोने लिखा था कि नामका जहाज अमेरिकाका सर्वे करने आ ... ।७ है ... किस्तान अपने साथ ले ... वैज्ञानिकको ... समझते हैं और

को ग्रहण करनेके लिए विशेष रूपसे अनुरोध करते हैं। डारविनने यह पत्र पाकर इसे पृथिवी भ्रमणका एक अच्छा सुयोग समझा, किन्तु उनके पिता राजी न हुए। उनका कहना था कि समुद्र यात्रासे डारविनकी पढाईमें विघ्न पडेगा। क्रमशः मैं भाईके विशेष अनुरोध करनेपर पिताको सम्मति देनी पडी। पिताकी सम्मति पाकर डारविनने सन् १८३१ के २२ दिसम्बरको बिगलपर चढ समुद्र यात्रा शुरू की। उनकी तनख्वाह ठहराई न गई थी। वे कप्तान साहबके घरपर ही रहते थे।

यही समुद्रयात्रा पीछे डारविनकी शिक्षा और साधना की प्रधान सहायक हुई थी। इसके पहले सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक हमबोल्टकी 'आत्मजीवनी' पढकर देश भ्रमण करने और प्राकृतिक विज्ञानकी चर्चा करनेकी आग्रह उनके मनमें जगा था। पृथिवी भ्रमणकी इस सुविधासे प्राकृतिक विज्ञानकी चर्चा करनेकी इच्छा और शक्ति उनमें अधिक बढ गई। इस समयकी उनकी चिट्ठी-पत्रियोंसे मालूम होता है कि विभिन्न देशोंकी प्राकृतिक शोभा देखकर वे आत्मविस्मृत और मुग्ध हो जाते थे। वे नाना देशोंके पशु पक्षियों, पेड पौधों और मिट्टी को जाँचकर इतना आनन्दित होते थे कि कभी कभी रात में उनको नींद ही न आती थी। वे बिगल द्वारा यात्रा करनेके पहले प्राकृतिक विज्ञानके कोई विशेषज्ञ न थे। किन्तु जब स्वभावसे शिक्षा पाकर पाँच वर्षके बाद वे देशको लौटे उस वक्त वे भूविद्या, प्राणिविद्या और उद्भिदविद्याके पूरे पारदर्शी थे। दक्षिण अमेरिकाके विविध प्राणियोंके ककालों, गेलोपेगो द्वीपके विविध पक्षियों और समुद्रके बीच प्रवालस्तूपोंके

को ग्रहण करनेके लिए विशेष रूपसे अनुरोध करते हैं। डारविनने यह पत्र पाकर इसे पृथिवी भ्रमणका एक अच्छा सुयोग समझा, किन्तु उनके पिता राजी न हुए। उनका कहना था कि समुद्र यात्रासे डारविनकी पढाईमें विघ्न पडेगा। क्रमशः मामाके विशेष अनुरोध करनेपर पिताको सम्मति देनी पडी। पिताकी सम्मति पाकर डारविनने सन १८३१ के २२ दिसम्बरको विगलपर चढ समुद्र यात्रा शुरू की। उनकी तनख्वाह ठहराई न गई थी। वे कप्तान साहबके घरपर ही रहते थे।

यही समुद्रयात्रा पीछे डारविनकी शिक्षा और साधना की प्रधान सहायक हुई थी। इसके पहले सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक हमबोल्टकी 'आत्मजीवनी' पढकर देश भ्रमण करने और प्राकृतिक विज्ञानकी चर्चा करनेकी आग्रह उनके मनमें जगा था। पृथिवी-भ्रमणकी इस सुविधासे प्राकृतिक विज्ञानकी चर्चा करनेकी इच्छा और शक्ति उनमें अधिक बढ़ गई। इस समयकी उनकी चिट्ठी पत्रियोंसे मालूम होता है कि विभिन्न देशोंकी प्राकृतिक शोभा देखकर व आत्मविस्मृत और मुग्ध हो जाते थे। वे नाना देशोंके पशु पक्षियों, पेड पौधों और मिट्टी को जाँचकर इतना आनन्दित होते थे कि कभी कभी रात में उनको नींद ही न आती थी। वे विगल द्वारा यात्रा करनेके पहले प्राकृतिक विज्ञानके कोई विशेषज्ञ न थे। किन्तु जब समावसे शिक्षा पाकर पाँच वर्षके बाद वे देशको लौटे उस वक्त वे भूविद्या, प्राणिविद्या और उद्भिद्विद्याके पूरे पारदर्शी थे। दक्षिण अमेरिकाके विविध प्राणियोंके ककालों, गैलोपेगो द्वीपके विविध पक्षियों और समुद्रके बीच प्रवालस्तूपोंको

अपनी आँखोंसे देखने और उनकी परीक्षा करनेके बाद उनके मनमें क्रमविवर्त्तनवाद् (theory of evolution) क्रमशः स्पष्ट रूपसे जग रहा था। सन् १८३६ के ६ दिसम्बरको वे स्वदेशको लौटे थे। देशको लौट आनेपर उनको धर्मयाजक का काय करनेकी कल्पना आप ही छोड देनी पडी। अमेरिकासे वे नाना प्राणियोंके कङ्काल और खनिज आदि लाये थे। अब उनका श्रेणि-विभाग और अपनी अभिज्ञता को पुस्तकाकारमें प्रकाशित करनेको व्यग्र हुए। सरकारी तहबीलसे १००० पाउण्ड पाकर, अन्यान्य वैज्ञानिकोंकी सहायतासे अपनी प्राणिविद्या और भूविद्या विषयक अभिज्ञता पुस्तकाकारमें प्रकाशित करने लगे। सन् १८३६ से १८४१ तक उन्होंने 'जिओलाजिकल सोसायटी' के प्रबन्धक का काम किया था। उनके भूविद्या-विषयक अनेक प्रबन्ध इस सभामें पढे गये थे।

सन् १८३८ की २९ वीं जनवरीको उन्होने विवाह किया। वे विवाहके वाद कोई तीन वर्षोंतक लण्डन नगरमें ठहरे थे। अनन्तर वे लण्डनसे १६ मील की दूरी पर डाउन नामक गाँवमें रहने लगे। वे फिर इसी गाँवमें बराबर रहे आये। उनकी सब गवेषणायें इसी छोटेसे गाँवसे प्रकाशित होती थीं। डारविन के सब आविष्कारोंका परिचय देना यहाँ सम्भव नहीं। कई स्थूल विषयोंका उल्लेख नीचे किया जाता है।

प्राचीन भारतका क्रमविवर्त्तनवाद या विकाशवाद।

डारविनके क्रमविवर्त्तनवादका परिचय देनेके पहले भारतके क्रमविवर्त्तनवादका उल्लेख करना शायद अप्रासङ्गिक

न होगा। यही क्रमविवर्त्तनवाद दार्शनिक अनुमान रूपमें प्राचीन ग्रीस और भारत में प्रचलित था। यहाँ इस विषय की विशेष आलोचना करनेको स्थान नहीं। फिर भी, भारतमें क्रमविवर्त्तनवादका होना दो अनुमानों—दशावतारवाद और आत्माके परावर्तनवाद (transmigration of soul)— से अच्छी तरह स्पष्ट होता है। इस दशावतारवादमें क्रमविवर्त्तनवादका रहस्य छिपा मालूम होता है, जिसकी ओर लोगोंका ध्यान नहीं जाता। इस दशावतारवादमें कहा गया है कि भगवान्‌ने मानव-रूप धारण करनेके पहले मत्स्यका (जलज) अनन्तर कूर्म, (जलज और भूचर) वराह, (पशु) नरसिंह (अर्द्ध मानव) और वामन (क्षुद्राकार मानव) का रूप क्रमश धारण किया था, अनन्तर परशुराम अर्थात् युद्धोपजीवी आदिम मनुष्यका अवतार लिया। पूर्ण मानवधर्मावलम्बी हुए रामचन्द्र। क्रमविवर्त्तनवादको स्वीकार किये बिना दशावतारवादका भारतमें प्रचार होना बिल्कुल सम्भव न था।

प्राचीन भारतमें क्रमविवर्त्तनवाद प्रचलित था, इसके दो प्रमाण हैं—आत्माका परिभ्रमणवाद और जन्मान्तरवाद। यही जन्मान्तरवाद योनिभ्रमणवादमें परिणत हो गया था। इसी योनिभ्रमणवादमें देखा जाता है कि आत्माने मनुष्य देहको पानेके लिए बहुतसी योनियोंमें भ्रमण किया है। अनेक पुराणोंमें योनिभ्रमणवादका उल्लेख है। वृहत विष्णु पुराणमें लिखा है—

स्थावरं विंशतेर्लक्षं जलजं नवलक्षकं।
कूर्माश्च नवलक्षञ्च दशलक्षं च पक्षिण ॥

त्रिंशलक्ष पशूनाञ्च चतुर्लक्ष च वानरा. ।
ततो मनुष्यतां प्राप्य तत् कर्माणि साधयेत् ॥*

मनुष्य जन्म पानेके पहले स्थावर (वृक्षादि) अनन्तर जलज (मत्स्यादि), कूर्म (जलचर और स्थलचर), पक्षी और पशुका जन्म क्रमशः प्राप्त होता है, अनन्तर वानरजन्म प्राप्त होता है। वानरजन्मके बाद मनुष्यजन्म प्राप्त होता है।

* यह श्लोक इस रूपमें बृहत विष्णुपुराणसे श्रीयुत भीमचन्द्र चट्टोपाध्याय "The Economic Botany of India," नामक अपनी पुस्तकमें उद्धृत किया है किन्तु विश्वकोषमें योनि शब्दका अर्थ लिखने वक्त विश्वकोषकारने इस श्लोक को इस रूपमें उद्धृत किया है—

जलजा नवलक्षाणि स्थावरा लक्षविंशति ।
कृमयो रुद्र संख्यका पक्षिण दशलक्षकम् ॥
त्रिंशल्लक्षाणि पशवश्चतुर्लक्षाणि मानुषा ।
सर्वयोनि परित्यज्य ब्रह्मयोनि ततोऽभ्यगात् ॥

इस पाठमें 'वानरा' शब्द न होनेपर भी सृष्टिका क्रमविवर्त्तनवाद अच्छी तरह स्पष्ट होता है। विश्वकोषकार श्रीयुक नगेन्द्रनाथ वसुने और भी कई ग्रन्थों से योनिभ्रमणवाद मूलक श्लोक उद्धृत किये हैं। यथा—

स्थावरास्त्रिंशलक्ष च जलजा नव लक्षक ।
कृमिजा दशलक्षश्च रुद्रलक्षश्च पक्षिण ॥
पशवो विंशलक्षश्च चतुलक्षश्च मानवा ।
एतेषु भ्रमण कृत्वा द्विजत्वमुपजायते ॥

—कर्मविपाक

इस योनिभ्रमणवादमें पहले मत्स्य, अनन्तर क्रमश जलज उभज, पक्षी, पशु, वानर और सबसे पीछे मनुष्यकी उत्पत्तिकी ओर लक्षकर कोई इस बातका सन्देह नहीं कर सकता कि प्राचीन भारतमें क्रमविवर्त्तनवाद प्रचलित न था। केवल यही नहीं आजकलके भूविद्याविशारदोंने परीक्षा द्वारा प्राचीन जीवकङ्कालों (Fossil) के क्रमविवर्त्तनमें जिन विभिन्न भेदों का निर्णय किया है वे पौर्व्वापौर्य्य उल्लिखित योनिभ्रमणवादके पौर्व्वापौर्य्यसे मिलते हैं। भूविद्याविशारदोंने देखा है कि पृथिवीके सर्व प्राचीन युगके पर्वतोंमें केवल जलज जन्तुओंके ही कङ्काल (यथा मछलीके काँटे) पाये जाते हैं, अन्य किसी प्रकारके उन्नत जीवोंके अस्तित्वके प्रमाण नहीं मिलते। इनकी अपेक्षा आधुनिक युगके पर्वतोंमें मेढ़क और मगर (crocodile) जैसे (जलचर और भूचर) जन्तुओंके कङ्काल पाये गये हैं। इसके बादके युगके पर्वतोंमें पक्षविशिष्ट जन्तुओं और क्रमश पक्षियों के कङ्काल आविष्कृत हुए हैं।

चतुराशीति लक्षाणि चतुर्भेदाश्च जन्तव ।
अण्डजा स्वेदजाश्चैव उद्भिजाश्च जरायुजा ॥
एकविंशति लक्षाणि ह्यण्डजा परिकीर्त्तिता ।
स्वेदजाश्च तथैवोक्ता उद्भिजास्तत् प्रमाणत ॥
जरायुजाश्च तावन्तो मनुष्याद्याश्च जन्तव ।
सर्वेषामेव जन्तूना मनुष्यत्व सुदुर्लभम् ॥

इनकी अपेक्षा आधुनिक कालकी मिट्टी के तहमें छोटे चौपाये और क्रमश बड़े चौपाये पाये गये हैं। ये सब चौपाये आजकलके घोड़े और गैंडे आदि जानवरोंसे बहुत भिन्न हैं। समकालीन मृत्तिका की तहमें बन्दरकी हड्डियां पहले पाई गई

हैं। भूविद्याविशारदोंका यह परीक्षामूलक आविष्कार भारतके योनिभ्रमण वादका समर्थन करता है।

क्रमविवर्तनके समर्थक परीक्षामूलक तथ्यका निरूपण

डारविनके क्रमविवर्त्तनवादके प्रचारके पहले अनेक परीक्षामूलक तथ्य आविष्कृत हुए थे, जिनकी सहायतासे डारविन अपने मतका प्रचार कर सके थे। भूविद्याविशारदों ने जीवकङ्कालोंके जो आविष्कार किये थे वे डारविनके क्रमविवर्त्तनवादके प्रचारमें सहायक हुए थे। ऐसे अनेक जन्तुओंके कङ्काल आविष्कृत हुए हैं, जो किसी वक्त जिन्दा थे, पर अब पृथिवी पर पाये नहीं जाते। एक प्रकारका पक्षी-साँप आविष्कृत हुआ है। उसका आकार पक्षी जैसा है किन्तु साँपकी तरह उसके जबड़े और दाँत हैं। अमेरिकामें एक प्रकारके घोड़ेका कङ्काल पाया गया है, जिसके खुर फटे हैं, और एक प्रकारके घोड़ेके खुर बिलकुल फटे नहीं हैं। इसलिए यह अच्छी तरहसे समझ पड़ता है कि आजकलके घोड़े इन मृत जीवोंसे क्रमशः पैदा हुए हैं। फ्रांस देशमें जमीनके नीचे एक प्रकारके हाथी और गैंडेके कङ्काल पाये गये हैं, जो आजकलके हाथियों और गैंडोंसे बिलकुल भिन्न हैं। इन सब कङ्कालोंका आविष्कार होने से स्वतः ही प्रश्न उठता है कि आजकलके जन्तु पूर्ववर्त्तीकालके जन्तुओंके सन्तान कैसे हो सके हैं।

जान हण्टर और सेण्ट हिलेयार आदि प्राणि विद्याविशारदोंने दिखलाया है कि समजातीय जन्तुओंकी हड्डियोंमें

अद्भुत ऐक्य पाया जाता है। मेरुदण्डवाले जन्तुओंकी छोटीसे छोटी हड्डीमें भी समानता देखी जाती है। जैसे तोतेकी बाजुओं, घोडे के अगले पावों और मनुष्यके हाथोंकी गठन प्रणाली एकही सरीखी होती है, केवल भिन्न भिन्न कार्योंके करनेके लिए किसीकी हड्डी छोटी होती है, किसीकी बडी होती है, किसी की तितर बितर होती है और किसीकी टेढी-मेढी होती है। इस प्रकारके एक्यके कारण एक ही श्रेणिसे क्रमश इन जन्तुओंकी उत्पत्ति प्रमाणित होती है।

और अनेक जन्तुओंके ऐसे अङ्ग प्रत्यङ्ग होते हैं, जिनका कोई उपयोग नहीं होता। जैसे एक प्रकार के साँपके पीछेकी ओर चमडेके भीतरसे दो पॉव देखे जाते हैं, किन्तु उन पावोंको वह जमीन पर टेक नहीं सकता, इसलिए उनका उपयोग नहीं होता। मालूम होता है कि ऐसे निरुपयोगी अङ्ग उनको अन्यान्य स्तन्यपायी जन्तुओं से उत्तराधिकार-सूत्रसे मिले हैं।

वान वायार नामक और एक वैज्ञानिकने एक आश्चर्यप्रद आविष्कार किया है। चौपाये आदि ऊँची श्रेणीके जन्तुओं के अस्पष्ट भ्रूणोंकी आकृति, मछली, सॉप आदि निम्न श्रेणी वाले जीवोंके भ्रूणकी आकृतिसे मिलती है। यदि प्रत्येक जीव पृथक् पृथक् सृष्ट होता तो कुत्तेके भ्रूणकी आकृति पहले मछली, सर्प, और पक्षी जैसी क्यों होती और उसके अप्रयोजनीय अवयव क्रमश क्यो लुप्त होते जाते? पुष्ट होने के पहले मनुष्य और कुत्ते के भ्रूणोंकी आकृत्ति समान होती है।

उद्भिद्राज्यमें भी इस प्रकारका परिवर्तन और ऐक्य देखा जाता है। डारविनने दिखलाया है कि पार्थक्य इतना

धीरे धीरे बढ गया है कि यह जाना नहीं जा सकता कि प्रकार (varitios) और उपगण (species) में क्या पार्थक्य है।

डारविनने बीस वर्षों तक इन विषयोंका अध्यन किया था। कितनी असंख्य पुस्तकें, सामयिक पत्र, भ्रमण वृत्तान्त और प्राकृतिक विज्ञान सम्बन्धी ग्रन्थ उन्होंने उस वक्त पढ़े थे, जिनका स्मरणकर वे स्वयं आश्चर्य करते थे, और सोचते थे कि कैसे वे इतना परिश्रम कर सके थे। वे उस वक्त भिन्न भिन्न जातिके कबूतर पालकर और पेड-पोधे लगाकर परीक्षा करते थे। अन्तमें उनकी गवेषणाओंने क्रमविवर्त्तनवादके सिद्धान्तको सत्य ठहराया। किन्तु अपने सिद्धान्त को प्रकाशित करनेकी इच्छा उन्हें नहीं हुई। सन् १८८५ में वे अपने बन्धु विख्यात भूतत्वविद् सर चार्ल्स लायेलके अनुरोधसे अपनी परीक्षाओंके फलों और सिद्धान्तको पुस्ताकाकार प्रकाशित करनेमें प्रवृत्त हुए। इसके पहले सन् १८४४ में उन्होंने अपना मत एक प्रबन्धमें लिख रक्खा था पर उसे भी प्रकाशित न किया था। अब उन्होंने अपनी परीक्षाओं और गवेषणाओंको एक पुस्तकमें सन्निविष्ट करना असम्भव समझा। इसलिए उन्होंने उसके कुछ अंशको प्रकाशित करने का विचार किया।

इसी समय सन् १८८५ की १८ वीं जूनको उनको वालेस नामके एक और वैज्ञानिकसे कुछ हस्तलेख मिले। वालेस मालय द्वीपपुञ्जमें प्राकृतिक विज्ञानकी आलोचनामें व्यस्त थे और अपनी गवेषणाओंसे वे भी डारविनके उद्भावित सिद्धान्त पर आ पहुँचे थे। दोनों जनोंके लेखोंकी भाषा भी कहीं कहीं मिलती थी। वालेसको डारविनके कार्मोंकी कुछ भी खबर न

ी। डारविनने लायेल, हुकर आदि अपने बन्धुओंको ये हस्त-लिपियाँ दिखलाईं। उन लोगोंने यह स्थिर किया कि वालेस और डारविन दोनोंके ही प्रबन्ध एक साथ पढ़े और छापे जाय। दोनों प्रबन्ध सन् १८५८ की १ ली जुलाईको लिनियन सोसायटी में पढ़े गये और उसकी पत्रिकामें प्रकाशित हुए। यह घटना विज्ञान-जगत के लिए शुभ थी, क्योंकि यह घटना न घटती तो डारविन के मत कभी प्रकाशित होते या नहीं, कहा नहीं जा सकता।

क्रमविवर्त्तन और प्राकृतिक निर्वाचन।

२४ नवम्बर सन् १८५६ को उनका विश्वविश्रुत "उपवर्गों की उत्पत्ति" (orgin of the species) नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। उसकी जितनी कापी (१२५०) छपी थीं, उसी दिन बिक गई। इस ग्रन्थमें उन्होंने अपने क्रमविवर्त्तनवाद और प्राकृतिक निर्वाचन को इतने उदाहरणों और परीक्षाओं द्वारा प्रमाणित किया है, कि उनका पाण्डित्य देखकर दाँतो तले अँगुली दबानी पडती है।

उनके पहले लेमार्कने जीवजन्तुओंको गठन प्रणालीमें सादृश्य देखकर स्थिर किया था कि सब जीवजन्तु कई आदि जीवजन्तुओंके वंशधर हैं। किंतु जबतक कोई यह दिखा न सका कि किस तरह एक ही गणसे उत्पन्न जीव भिन्न भिन्न हो गये हैं, तबतक लेमार्कका सिद्धान्त माना न जा सका। लेमार्कके बीस वर्ष बाद डारविन और वालेसने इस विषयका अच्छा उत्तर दिया। उन्होंने दिखलाया कि प्राकृतिक निर्वाचनसे वृक्षादि और जन्तुओंमें पृथक

उत्पत्ति हुई है। पहले वैज्ञानिकोंकी धारणा थी कि प्रत्येक प्रकारकी वृक्षलता और जीवजन्तु समय समयमें पृथक् पृथक् सृष्ट हुए हैं, और आजकलकी वृक्षलता और जीवजन्तु उनके ही वंशधर हैं। डारविन और वालेसने कहा कि ऐसा नहीं हो सकता। जितनी वृक्षलता और जीवजन्तु हैं वे कई बड़े बड़े गणों (वर्ग, ८।२९५) में विभक्त हैं और प्राकृतिक निर्वाचनसे उन सब गणोंसे भिन्न भिन्न उपगणोंकी उत्पत्ति हुई है। यह प्राकृतिक निर्वाचनको मूल सूत्रोंमें विभक्त किया जा सकता है।

(क) प्रत्येक वृक्षलता और जीवजन्तु वंश की रक्षा करनेके लिए सचेष्ट रहते हैं। किन्तु यदि सब चीजों को ही रक्षा हो सके तो पैदा हुए सब वृक्षादि और जीवजन्तुओंको स्थान और आहार देना पृथिवीके लिए असम्भव हो जाये। इसी कारण जीवन संग्राममें जो औरोंसे अधिक आत्मरक्षा कर सकेंगे, वे ही जीवित रहेंगे, बाकी सब मर जायँगे। वालेसने हिसाब लगाकर दिखाया है कि यदि एक जोड़ा पक्षीके सालमें चार सन्तानें हों और उनके भी सालमें चार सन्तानें होती रहें तो पन्द्रह सालमें एक जोड़ा पक्षीके प्राय बीस करोड़ वंशधर होंगे। हैक्सलेने इसी तरह हिसाब लगाकर सिद्ध किया है कि एक उद्भिद्से यदि सालमें ५० बीज पैदा हों तो ९ वर्षोंमें उसके वंशधरोंसे यह पृथिवी ढक जायगी। और उसपर अन्य वृक्षोंके लिए स्थान न रहेगा। इन असंख्य वंशधरोंमेंसे जो सबसे अधिक उपयुक्त होंगे, वे ही जीते रहेंगे। बलिष्ठ पिताके वंशकी रक्षा अधिकतर होती है। नाना प्राकृतिक कारणोंसे अधिकांश वृक्षों और जन्तुओंकी सन्तानें मर जाती

हैं। जलवायु, कीटपतङ्ग, मक्रामक रोग आदि उनकी मृत्युके प्रधान प्राकृतिक कारण हैं। यहाँ एक दृष्टान्त दिया जा सकता है। इमलीके एक पेड़से एक सालमें लाखों बीज पैदा होते हैं। किन्तु उनमेंसे अधिकांश बीज पेड़के नीचे गिरते हैं, इससे वे अङ्कुरित हो नहीं होते और जो होते भी हैं, वे सूख जाते हैं। एक जगहपर बहुतसे बीज गिरनेसे वे आहार नहीं पाते और इसलिए सूख जाते हैं। ऊँचे पर्वतोंपर बरफसे ढके आर्टिक महादेशमें और मरुभूमिपर अनुपयोगी जल-वायुके कारण वृक्षादि पैदा नहीं होते, जीवजन्तुओंकी संख्या भी कम होती है। मनुष्यमें सन्तानोत्पत्तिकी क्षमता कम होती है, किन्तु पच्चीस वर्षोंमें मनुष्यकी संख्या भी दूनी हो जाती है।

(ख) पिता माताकी दैहिक गठन सन्तानको उत्तराधिकार सूत्रसे प्राप्त होती है। किन्तु बीजके तारतम्यके कारण कोई भी दो सन्तानें एकसी नहीं होतीं। नाना प्राकृतिक कारणोंसे वृक्षादि या जीवजन्तुकी किसी विशेष इन्द्रिय या इन्द्रियोंमें सामान्य अन्तर होता है और वह अन्तर क्रमशः वंशधरोंमें उत्तरोत्तर बढ़ता या घटता जाता है।

इस प्रकार नाना प्राकृतिक कारणोंसे एक ही गणसे विविध उपगणोंकी उत्पत्ति होती है। इस प्रकारकी उत्पत्ति सम्भव है, यह हम लोग पशु पक्षी पालकर मनुष्यकर्तृक निर्वाचनमें स्पष्ट देखते हैं। जो लोग कबूतर पालते हैं वे जानते हैं कि विविध प्रकारके कबूतरोंको एकत्र रखनेसे कितने विचित्र प्रकारके कबूतर उत्पन्न होते हैं। किसीके पंख खूब

चौडे होते हैं, किसीके कम, किसीके होंठ बहुत मोटे होते हैं किसीके कम, कोई उडकर बहुत दूर जा सकते हैं और कोई नहीं। इन विविध जातियोंके कबूतरोंकी परीक्षा करनेपर देखा गया है कि उनकी देहकी हड्डियों और अन्यान्य इन्द्रियोंमें बहुत कुछ भिन्नता आ गई है। निर्वाचनके द्वारा पालतू कुत्तोंमें निउफाउंडलैण्ड कुत्तेतक देखे जाते हैं। मनुष्य इस प्रकारसे निर्वाचन द्वारा घोडे, गाय, भैंस आदि भिन्न भिन्न जातिके जन्तुओंमें विविध उपगणोंकी उत्पत्ति कर सकता है। यह सभी लोगोंको मालूम है कि घोडे और गधीके सहवाससे अश्वतर नामक उपगणकी उत्पत्ति होती है।

जब यह देखते है कि मनुष्य थोडे समयमें ही निर्वाचनके द्वारा विचित्र उपगणोंकी उत्पत्ति करते हैं, तब प्रकृतिने जो युग-युगान्तरसे गणोंसे उपगण और उपगणोंसे उपगणोंकी उत्पत्ति की है, उसमें विचित्रता क्या? मनुष्य जब थोडे समय में उपगणोंमें इतना परिवर्त्तन कर सकता है, तब प्रकृति निर्वाचन द्वारा उपगणोंमें कितना बडा परिवर्त्तन कर सकती है यह अनायास ही समझमें आ सकता है। इतना परिवर्त्तन हो सकता है कि उपगण क्रमश स्वतन्त्र जातिमें परिणत हो सकते हैं। इस तरह निर्वाचन और क्रमविवर्त्तनके द्वारा पृथिवीके असंख्य प्रकारके जीवजन्तुओं और वृक्षादिकी उत्पत्ति हो सकी है।

यह पहले ही कहा जा चुका है कि नाना ज्ञात और अज्ञात उपायोंसे प्रकृति निर्वाचनके द्वारा उपगणोंकी सृष्टि कर रही है। यहाँ कई उपाय लिखे जाते है।

परिपार्श्विक अवस्था।

(Natural Surroundings)

कल्पना कीजिये कि किसी जगह पर झुण्डके झुण्ड बाघ रहते हैं और उनके प्रधान आहार हरिण हैं। यहाँ इन बाघोंमेंसे जो खूब द्रुतगामी होंगे वे ही हरिणोंका वधकर और उनको खाकर जीवित रहेंगे। इस प्रकारके देशमें द्रुतगामी लम्बाकृति क्षीणशरीर व्याघ्र ही पाये जायँगे, अन्य जातिके व्याघ्र न होंगे। शीत देशके जीवजन्तु या वृक्षादि यदि ग्रीष्मप्रधान देशमें लाये जायँ तो उनमेंसे जो बचेंगे वे नई जगह और नये जलवायुके उपयुक्त बननेकी चेष्टा करेंगे। वे कहीं कहीं नये उपगणमें परिणत हो जायँगे। बहुतसे लोगोंने पहाड़ पर बेलके पेड़ देखे होंगे। जो देखनेमें छोटे सख्त और साधारण बेलके पेड़ोंसे बहुत कुछ भिन्नाकृति होते हैं। समतल क्षेत्रमें पैदा हुए बेलके बीजोंसे ही इन पेड़ोंकी उत्पत्ति हुई है, किन्तु पहाड़में जैसा खाद्य मिलता है, और वहाँका जलवायु जैसा होता है उसके उपयुक्त बननेकी चेष्टा करनेसे पेड़ोंकी आकृति बहुत कुछ भिन्न हो जाती है। इस प्रकार जगह और जलवायुके कारण कहीं कहींके और विशेषत समुद्रमध्यस्थ द्वीपके वृक्षादि और जीवजन्तु बिलकुल भिन्न होते हैं। प्राकृतिक निर्वाचन कैसा जटिल है, यह नीचे लिखे उदाहरण-से स्पष्ट हो जायगा। विलायतमें हार्टसीज़ और डचक्लावर नामके दो उद्भिद हैं। मक्खियाँ और कीटपतङ्ग पुष्पफूलकी रेणु स्त्री फूलमें लाती हैं और उनके सङ्गमसे बीजकी उत्पत्ति होती है। उपर्युक्त दोनों फूलोंमें अमृत या नामकी

मक्खियाँ ही विचरण करती है। किन्तु चूहे इन मक्खियोंके छत्तोंको नष्टकर डालते है, और दूसरी ओर बिल्लियां चूहोंको खा जाती हैं। जिस प्रदेशमें बिल्लियोंकी संख्या अधिक होगी, उनमें चूहोंकी संख्या कम होगी। इसलिये वहाँ वे मक्खियाँ बहुत होगी और इस कारण फूल भी अधिक खिलेंगे। जहाँ बिल्लियोंकी संख्या कम होगी, वहाँ चूहोंकी संख्या अधिक होगी और इसलिए वहाँ फूल भी बहुत कम खिलेंगे। इसलिए किसी भी प्रदेशमें उपयुक्त दो जातिके फूलोंकी संख्या वहाँकी बिल्लियोंकी संख्या पर निर्भर है।

अवयवोंका व्यवहार और अव्यवहार।

(Use and disuse of parts)

अनेक अवयव व्यवहार न करनेसे धीरे धीरे नष्ट हो जाते है, और व्यवहार करनेसे परिवर्त्तित हो जाते हैं। जो अवयव कार्योपयोगी होते है, वे ही स्थायी होते हैं। इसका प्रधान दृष्टान्त हम पालतू पशुपक्षियोंमें पाते हैं। एक ही जन्तुमें पालतू और जंगली अवस्थामें अन्तर पाया जाता है और उनके वंशधरोंमें और भी भिन्नता पाई जाती है। जंगली मुर्गे, बदक और राजहंस जंगली अवस्थामें अच्छी तरह उड़ सकते है, किन्तु पालतू हालतमें उनको उड़नेकी जरूरत नहीं रहती, इसलिए उनके परोंकी हड्डियाँ धीरे धीरे इस तरह परिवर्त्तित हो जाती है कि उनमें अधिक दूरतक उड़नेकी ताकत नहीं रहती और उनकी सन्तानें और भी कम उड़ सकती हैं। छोटे छोटे द्वीपोंमें प्राणियोंको प्राणके डरसे उड़ना नहीं पड़ता, इसलिए वहाँ पक्षहीन या छोटे छोटे पक्षवाले पक्षी भी देखे जाते हैं। अनेक पालतू पशुओंके कान नीचेकी ओर झुके होते

हैं, किन्तु जंगली हालतमें उनके कान सीधे खड़े देखे जाते हैं। पालतू हालतमें वे बिलकुल डरते नहीं, और इसलिए कान खड़े करनेका अभ्यास छोड़ देनेसे उनके कानकी हड्डियाँ इस तरह परिवर्तित हो जाती हैं कि उनके कान स्वभावतः लटके रहते हैं उनकी जो सन्तानें होती हैं उनके कान भी उत्तराधिकारी सूत्रसे लटके होते हैं। चलते वक्त गोबरीलोंके पाँव प्राय टूट जाते हैं, इसलिए उनकी सन्तानोंमें क्रमशः पाँव लुप्त हो जाते हैं। वालस्टन नामके एक साहबने एक जगह देखा था कि ५५० प्रकारके गोबरीलोंमेंसे २०० गोबरीलोंके पंख इतने छोटे हो गये थे कि वे उड़ न सकते थे। इस प्रकार अनावश्यक अवयवोंके अव्यवहार और आवश्यक अवयवोंके व्यवहारसे विविध उपगणोंकी उत्पत्ति होती है।

सुन्दर सुन्दर फूलोंमें जो विचित्र विचित्र रंग देखे जाते हैं वे मनुष्यकी आँखें तृप्त करनेके ही लिए नहीं हैं बल्कि वे विविध रंग उद्भिदके जीवन और वंशरक्षाके लिए विशेष प्रयोजनीय हैं। घास आदि जिन उद्भिदोंके बीज वायुकी सहायतासे उत्पन्न होते हैं, उनके फूल रंगीन नहीं होते। किन्तु जिन फूलोंकी रेणु ले जानेके लिए मक्खियाँ या कीट-पतङ्गोंकी जरूरत होती है उन फूलोंके रंग विचित्र वर्णके होते हैं। आम, सेव, पपीता आदि अनेक पके फलोंके रंग भी उनकी वंशरक्षाके लिए आवश्यक होते हैं। पक्षियों और जन्तुओंके आकृष्ट होनेके लिए उनमें रंग होता है। इसी प्रकार प्राकृतिक निर्वाचनके कारण पुरुष जातीय पक्षियोंके पंख विचित्र रंगके होते हैं, पुरुष सिंहके केशर होता है और मोरके चोटी होती है, किन्तु स्त्री जातीय इन प्राणियोंका वैसा रूप

डारविनके इस मतको पहले किसीने स्वीकार न किया। डारविनको पहले पहल गालियॉ सहनी पड़ीं। क्रमश लायेल-प्रमुख प्रख्यात भूविशारदोंने हैक्सले प्रमुख प्राणिविद्या-विशारदोंने और हुकार जैसे उद्भिदविद्याविशारदोंने उनका मत स्वीकार किया। आज कल डारविनके प्राकृतिक निर्वाचन, पारिपार्श्विक अवस्था आदि विषयोंके सम्बन्धमें बहुत कुछ मत बदल गया है, किन्तु क्रमविवर्त्तनके द्वारा वृक्षादि और जीवोंकी सृष्टि हुई है, डारविनका यह मत अटल है। उनके सिद्धान्तोंने अनेक विज्ञानोंको अनुप्राणित किया है। उन सिद्धान्तोंकी सत्यताकी जॉच करनेके लिए कितने ही वैज्ञानिकोंने कितनी ही नई नई परीक्षायें की है और उन परिक्षाओं-के द्वारा भूविद्या, उद्भिदविद्या और प्राणिविद्याकी बहुत अधिक उन्नति हुई है।

मनुष्य की उत्पत्ति।

(Descent of man)

डारविनने वृक्षलता और पशुपक्षियोंकी उत्पत्तिकी आलोचना 'उपगणोंकी उत्पत्ति' नामक अपनी पुस्तकमें की है। मनुष्य श्रेष्ठ जीव है, इसीसे उसकी उत्पत्तिकी आलोचना उन्होंने एक स्वतन्त्र ग्रन्थमें की है। उन्होंने दिखलाया है कि यद्यपि मनुष्य प्राणियोंमेंसे श्रेष्ठ है, किन्तु मनुष्य और प्राणियोंसे बिलकुल और पृथक् नहीं है।

प्रथमत —मनुष्यका दैहिक गठन अन्यान्य उच्चश्रेणीके प्राणियों से बिलकुल भिन्न नहीं है। बन्दर, चमगीदड, सील मछली और मनुष्यकी हड्डियॉ, पेशियॉ, स्नायु रक्तस्थली आदि-

में समानता होती है। हैक्सले आदि वैज्ञानिकों ने प्रमाणित किया है कि मनुष्यके श्रेष्ठ अङ्ग मस्तिस्क की गठनप्रणाली वानरजातीय जीवों के मस्तिष्ककी गठनप्रणालीसे बहुत कुछ मिलती है, किन्तु पूर्ण रूपसे नहीं। यदि पूर्ण रूपसे समानता होती तो बन्दर और मनुष्यकी बुद्धिवृत्ति भी समान होती साधारण बन्दरों और सिम्पाञ्जि, और आदि वानर जातीय जीवोंके देहिक गठन और मनुष्यके दैहिक गठनमें सबसे अधिक समानता देखी जाती है।

अपुष्ट भ्रूणावस्थामें कुत्ते आदि मेरुदण्डवाले प्राणियों और मनुष्यके भ्रूणोंमें कोई भिन्नता मालूम नही होती। क्रमश एकही प्रकारके इन्द्रियसे चिड़ियोंके डैने और पॉव और मनुष्यके हाथ और पॉव पैदा होते है। भ्रूणोंकी परिणतिके समयही जीवोंका पार्थक्य प्रत्यक्ष होता है। ऐसी बातें बहुतों को चकरायेंगी जरूर, किन्तु हैं ये परीक्षामूलक सत्य।

बुद्धिवृत्ति और विचित्र मानसिक क्रियाओंके कारण मनुष्य अन्यान्य जीवोंसे बहुत अधिक श्रेष्ठ है, किन्तु अन्यान्य जीवो में बुद्धिवृत्ति नही होती या वे प्रेम करना, नाराज होना, कृतज्ञता प्रकट करना, अनुकरण करना, बदला लेना और विचार करना बिलकुलही नहीं जानते, ऐसी बात नहीं है। दो एक उदाहरण यहाँ दिये जाते है। कुत्तेकी प्रभुभक्ति सबको ही विदित है। चकवाक-चकवाकीका दाम्पत्य प्रेम कविकल्पना नहीं है, बिलकुल सत्य है। सन्तानोंपर माताका स्नेह जैसा मानव-समाजमें देखा जाता है, वैसाही और जीवोंमें भी देखा जाता है। जिन्होंने मृतवत्सा गायका रोना सुना है वे कभी इस बातको अस्वीकार न करेंगे। अनुकरण करनेकी प्रवृत्ति और

क्षमता अनेक पशुओंमें देखी जाती है। सुग्गे, मैना आदि 'राधाकृष्ण' कहते हैं और बन्दर साष्टाङ्ग प्रणाम करते हैं। पशुओंमें चिन्ता करनेकी क्षमता होती है, इसका भी प्रमाण पाया जाता है। चिडियाखानाके किसी हाथीके पास कोई चीज फेंक दीजिये। यदि वह सूँडसे उसे न पा सकेगा तो उस चीज के दूसरी ओर सूँडसे हवा छोडता रहेगा, जिससे वह चीज हवाके झोंकेसे पास आजायगी और वह उसे पा सकेगा। एक साहबने वायना नगरमें देखा था कि एक भालूने निकटवर्ती जलमें रोटीका एक टुकडा उतराते देखकर अपने पंजेसे एक छोटी नाली बना दी थी जिससे पानीके साथ रोटीका टुकडा भी नालीमें बहकर आपहुँचा था। डारविनने इस तरहके अनेक उदाहरण दिये हैं। वानर जातिकी बुद्धिवृत्ति मनुष्यकी बुद्धि-वृत्तिके बहुत निकट पहुँचती है। अनेक लोगोंका खयाल है कि केवल मनुष्यही अस्त्र-शस्त्रोंका व्यवहार करते हैं, किन्तु ऐसी बात नहीं है। जंगली सिम्पञ्जि पत्थरसे फलोंको फोडकर उसका भीतरी अंश खाता है। हाथी पेडकी डाल तोडकर मक्खियाँ उडाते हैं। एक बार एवसीनिया देशमें एक पहाडी रास्ते पर कोबर्ग गोथाके ड्यूकके सहचर पहाडपर बैठे बन्दरों के दलपर गोली चला रहे थे। उस वक्त सब बन्दरोंने मनुष्यों की तरह उनपर एक साथ पत्थर फेंककर उनको भगा दिया था। स्मृतिशक्ति आदि उच्च वृत्तियाँ भी जन्तुओंमें कुछ कुछ होती हैं। डारविनके एक पालतू कुत्ता था। वे जान बूझ कर पाँच वर्ष उसे बांध रखनेके बाद एक दिन उसके पास गये। उनको कुत्ता पहले पहचान न सका। अनन्तर उसे हठात् स्मरण हो आया और वह उनके पीछे पीछे पहलेकी तरह

घूमने लगा। भाषाने अवश्यही मनुष्यको उच्चश्रेणीका प्राणी बना दिया है। फिर भी जन्तुओंमें भी भाषाका प्रचलन थोडा बहुत है। विविध प्रकारके शब्दोंके द्वारा वे अपने मनका भाव प्रकट करते हैं। उनके क्रोध करने, और रोनेकी भाषा जुदी होती है, यह अच्छी तरह समझ पडता है। मनुष्य अपने मनके सब भावोंको भाषा द्वारा जिस तरह व्यक्त कर सकते हैं, वे अलबत्ता वैसा नहीं कर सकते। मनुष्यमें लिखनेकी शक्ति चर्चा और आलोचनाका फल है। इस बलके कारण वे पशुओंसे बहुत श्रेष्ठ हैं, किन्तु असभ्य जातियों में लिखनेकी भाषा नहीं।

सौन्दर्य्यका ज्ञान केवल मनुष्यको ही नहीं होता। अन्यान्य अनेक जन्तुओंको भी सौन्दर्य्यका ज्ञान प्राप्त है। मोरके सुन्दर पख मोरनीको वश करने के लिए होते हैं, मनुष्यकी आँखों को तृप्त करनेके लिए नहीं। अनेक पुं पक्षी स्त्री पक्षीका मनोरञ्जन करनेके लिए विविध प्रकारके कलरव करते हैं। मनुष्योंमें सौन्दर्य्यज्ञान और सङ्गीत प्रेमत समान नहीं होता। सभ्य-जातियों को असभ्य जातियों की पोशाक और वेशभूषा पसन्द नहीं होता, यह इसका प्रमाण है।

बहुतसे लोगोंका खयाल था कि मानव-जातिमें भगवान् पर विश्वास होना एक भिन्नता है। मनुष्य जातिमें भगवान्पर विश्वास होना अनिवार्य्य है, यह बात ठीक नहीं, कारण डार-विनने भ्रमण करने वालोंके भ्रमणवृत्तान्तसे प्रमाणित किया है कि अनेक असभ्य जातिया भगवान्पर विश्वास नहीं रखतीं। मानवजातिमें जो भगवान्पर विश्वास और धर्म देखा जाता वह मनुष्य समाजमें मनुष्यजातिकी उन्नति और शिक्षाके साथ क्रमश फैला है।

पशु पक्षियों में भी समाजिक वन्धन वहुत कुछ देखा जाता है। जो लोग शिकार खेला करते हैं वे लोग जानते हैं कि वडी वडी नदियोंमें एक साथ हजारों राजहंस, वदक, कबूतर, चक्रवाक आदि रहते हैं। वन्दर जब वागपर धावा करते हैं उस वक्त वे साधारणत: एक दलपतिके आज्ञानुसार कार्य करते हैं। गायों, भेडों और वकरियोंको एक ही साथ चरते अनेक लोगोंने देखा है।

इस प्रकार डारविनने दिखलाया है कि शरीरकी गठन-प्रणाली, वुद्धिवृत्ति और मानसिक क्रियाओंके कारण मनुष्य अन्य जन्तुओंसे विलकुल स्वतन्त्र नहीं है। शिक्षा और सभ्यताके कारण मानव समाजमें उच्च मानसिक वृत्तियोंका विकाश वढ़ता जाता है, इसीसे वह श्रेष्ठजीव मालूम होता है, नहीं तो अफ्रिकाकी अनेक असभ्य मानव जातियोंमें और वानरजातिमें विशेष अन्तर नहीं है। इसीसे डारविनने कहा है कि पृथिवी पर सवसे पहले मनुष्यकी ही सृष्टि नहीं हुई है। पृथिवीपर पहले निम्नश्रेणीके जीवोंकी सृष्टि हुई है। वे क्रमविवर्तनके द्वारा उच्चतर जीवोंमें परिणत हो गये हैं। मनुष्य और वानरजातिमें वहुत कुछ समानता देखी जाती है। वानर ही मनुष्यके पूर्वपुरुष हैं। वानर जातिका पूर्वपुरुष कोई चतुष्पद स्तन्यपायी (mammal) जन्तु था। वे स्तन्य पायी जन्तु किसी प्राचीन द्विगर्भ पशु (marsupial) से पैदा हुए थे। वे नाना परिवर्त्तनोंमें पड किसी उभचर (जलचर और स्थलचर) जीवसे पैदा हुए थे और वे उभचर जीव किसी मत्स्याकृति जन्तुसे उत्पन्न हुए थे। उनके पूर्व पुरुष एक प्रकारके ऐसे जल-जन्तु थे, जिनके शरीरमें पुंश्चिन्ह और स्त्री चिह्न दोनों

विद्यमान थे और शरीरके कार्योपयोगी अवयव असम्पूर्ण-रूपसे विद्यमान थे।*

---

*डारविनने Origin of the Species नामक अपने ग्रन्थमें लिखा है—"I believe that animals are descended from at most only four or five progenitors, and plants from an equal or lesser number. Analogy would lead me one step farther, namely, to the belief that all animals and plants are descended from one prototype. But analogy may be a deceitful guide" (p. 424) किन्तु अनन्तर वे "Descent of Man" नामक अपनी पुस्तकमें क्रमविवर्त्तनके चरम सिद्धान्त पर पहुँच गये हैं। उन्होंने लिखा है—We thus learn that man is descended from a hairy tailed quadruped, properly arboreal in its habits, and an inhabitant of the old world. This creature if its whole structure had been examined by a naturalist, would have been classed amongst the quadrumana, as surely as the still more ancient progenitors of the Old and New world monkeys. The quadrumana and all the higher mammals are probably derived from an ancient marsupial animal, and this through a longline of diversified forms, from some amphibian like creature and this again from some fish like animal. In the dim obscurity of the past we can see that the early progenitor of all the vertebrata must have been an aquatic animal provided with branchiae with the two sexes united in the same individual and with the most important organs of the body (such as the brain and heart) imperfectly or not all developed. This animal seems to have been more like the larva of the existing Marine Ascidians than any other known form." p. 609)

इस क्रमिक सृष्टि-प्रकरणसे अनेक विषयोंका समाधान होता है। पहले तो भूविद्याविशारदोंको सर्वप्राचीन युगके पर्वतोंमें केवल मत्स्याकृति कङ्काल और पिछले युगोंके पर्वतोंमें क्रमश उभचर जन्तु, पक्षी, पशु, बन्दर और मनुष्यके कङ्काल क्यों मिले, इसकी मीमांसा होती है। प्राकृतिक निर्वाचनसे क्रमश' उन्नततर जीव जन्तुओंकी उत्पत्ति हुई है। दूसरे यह क्रमिक सृष्टिप्रकरण समझा देता है कि मनुष्यके हाथ और मछलीके पर एक ही प्रकारके सृष्ट पदार्थ हैं। उत्तराधिकारी सूत्रसे स्थूल स्थूल अवयव सब जीव-जन्तुओंको ही प्राप्त हुए हैं।

डारविनका 'डिसेण्ट आफ मैन' नामक ग्रन्थ सन् १८७१ में प्रकाशित हुआ। प्राकृतिक निर्वाचनके सम्बन्धका उनका मत इसके पहले अनेक विख्यात वैज्ञानिक स्वीकार कर चुके थे। किन्तु इस ग्रन्थमें बाइबिलके विरुद्ध सिद्धान्त थे। इसलिए अनेक लोगोंने डारविनको बाइबिलद्वेषी अधार्मिक कहकर गालियाँ दीं। किन्तु डारविनके अनेक शिष्य भी हो गये। तीन वर्षोंके भीतर इस ग्रन्थका द्वितीय संस्करण प्रकाशित हुआ।

इन दो ग्रन्थोंमें डारविनने वृक्षलताओं और जीव जन्तुओंकी सृष्टिका रहस्य जिस प्रकार खोला था, उससे भूविद्या, प्राणिविद्या, उद्भिद्विद्या आदि विज्ञानों पर नया प्रकाश पड़ा। तब सबने समझा कि प्रत्येक जन्तु या वृक्षलता पृथक् पदार्थ नहीं है, विश्वस्रष्टाकी अनन्त सृष्टिमें उसका निर्दिष्ट स्थान है, विश्वकी समस्त सृष्टिमें एक निगूढ ऐक्य है। उस वक्तसे भूविद्याविशारद गत युगोंके कङ्काल खोजने लगे, प्राणिविद्या-

विशारद और उद्भिदविद्याविशारद प्रत्येक वृक्षलता और जीव-जन्तुओंके शारीरिक ऐक्य और पार्थक्य और उनके कार्योंका अनुसन्धान करने लगे। डारविनके इस क्रमविवर्त्तनवादने अबसे प्रत्येक विज्ञानको अनुप्राणित किया। जडजगतमें जैसे निउटनके आविष्कारोंने खलबली डाल दी थी, उसी तरह जीवजगतमें डारविनके आविष्कारोंने खलबली डाल दी।

केंचुएका (Earth Worm) कार्य

डारविनने और भी कई आविष्कार किये थे, जिनके द्वारा अन्य कोई वैज्ञानिक क्रमविवर्त्तनवादकी प्रतिष्ठा किये बिना ही विख्यात हो सकता था। यहां कई विषयोंका परिचय दिया जाता है। सन् १८३८ में उन्होंने केंचुएके काम देखकर एक प्रबन्ध पढा था, वही सन् १८८१ में परिवर्द्धित रूपमें पुस्तकाकार प्रकाशित हुआ था। इस पुस्तकमें उन्होंने दिखलाया है कि केंचुए पृथिवीका अनेक उपकार करते हैं। पहले वैज्ञानिकोंकी धारणा थी कि घासके नीचेकी मिट्टी जैसीकी तैसी रहती है। डारविनने इस धारणाको बिलकुल भ्रमात्मक सिद्ध किया। मिट्टीके नीचे लाखों केंचुए पैदा होकर घासके नीचेकी मिट्टीको ऊपर उठा देते हैं, जिससे मिट्टी बदल जाती है। यही उठी हुई मिट्टी वायु या वृष्टिके द्वारा नीचेके तहमें पहुँचती है। इसी तरह मिट्टी क्रमसे नई होती रहती है।

कीटभोजी उद्भिद ।

(Insectivorous Plant)

सन् १८८५ में 'कीटभोजी उद्भिद' नामका एक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। इस ग्रन्थमें इस प्रकारके उद्भिदोंके कार्योंका

वर्णन है। इन उद्भिदोंके कार्य अत्यन्त अद्भुत हैं,—जीव-जन्तुओं जैसे हैं। उनके पत्तों पर जब कीट पतङ्ग बैठते हैं तब उनके पत्ते गुडिया जाते हैं।।अनन्तर उनके पत्तोंसे एक प्रकारका रस निकलता है। इस रसकी मददसे उद्भिद कीट-पतङ्गोंको खा जाते हैं। सन् १८६० में डारविन सेसेक्स प्रदेशको घूमने गये थे। वहाँ उन्होंने इस प्रकारके उद्भिदोंके ऐसे कार्य देखकर अनेक बातोंका आविष्कार किया।

इसके सिवा उन्होंने एक ग्रन्थमें समुद्रमध्यस्थ प्रवाल-द्वीपोंकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें नया मत प्रकाशित किया। दूसरे एक ग्रन्थमें लताओं (climbing plants) के सम्बन्धके अपने आविष्कार प्रकाशित किये। आरचिड (orchid) जातिके पेड कीट-पतङ्गोंके द्वारा कैसे बीजाक्त (fertilised) होते हैं, इसका निर्णयकर उन्होने एक पुस्तक लिखी। वृक्षलताओंके जारजनन और बीजजननके विषयमें भी एक पुस्तक उन्होंने लिख डाली। इनके सिवा भूविद्या और उद्भिद विषयक कई गवेषणामूलक ग्रन्थ उनकी असीम कार्यपटुता, अध्यावसाय और पाण्डित्य-का परिचय दे रहे हैं।

इस प्रकार अत्यधिक परिश्रम करनेसे उनका स्वास्थ्य बहुत दिनोंसे बिगड़ रहा था। प्रायः चालीस वर्षसे वे पेटकी पीडा और बातसे कष्ट पा रहे थे। जब तबीअत बहुत खराब हो जाती थी तब कभी कभी काम छोडकर घूमने जाते थे। घरमें वे बडे सयमसे रहते थे। दिनमें बीच बीचमें लिखते-पढ़ते थे और बीच बीचमें घूम आते थे। असलमें वे दुर्बल स्वास्थ्यसे युद्धकर जी रहे थे। यदि वे इतना अधिक मानसिक श्रम न करते तो शायद उनका स्वास्थ्य अच्छा रहता, किन्तु

वे लिखे पढ़े बिना रह नहीं सकते थे। उनका व्यवहार बहुत शिष्ट था और चरित्र भी बहुत मधुर था। यह पहले ही लिखा जा चुका है कि वे डाउन नामके एक छोटेसे गाँवमें रहते थे। वहीं सन् १८८२ के १८ अप्रैलको, ७३ वर्षकी अवस्थामें, उनका देहावसान हुआ। मृत्युकालमें वे पाँच पुत्र और दो कन्यायें छोड़ गये थे।

इन महापुरुषने जीवदशामें ही यह सुना था कि उनको उनके आविष्कारोंके कारण लोग बाइबिल-द्वेषी और अधार्मिक कह रहे हैं। यह आनन्दकी बात थी कि १९ वीं शताब्दीमें मनुष्योंका मन बहुत कुछ ऊँचा हो गया था। नहीं तो डारविन इसके पहले जन्म लेनेपर या तो गेलिलिओकी तरह कैदकर दिये जाते या ब्रूनोकी तरह जनतो आगमें जला दिये जाते। उनकी मृत्यु हो जाने पर अङ्गरेज जातिने सुप्रसिद्ध वेस्टमिनिस्टरएबीमें उनको मिट्टी दे उनकी स्मृतिके प्रति उचित सम्मान ही प्रदर्शित किया था।